

म.

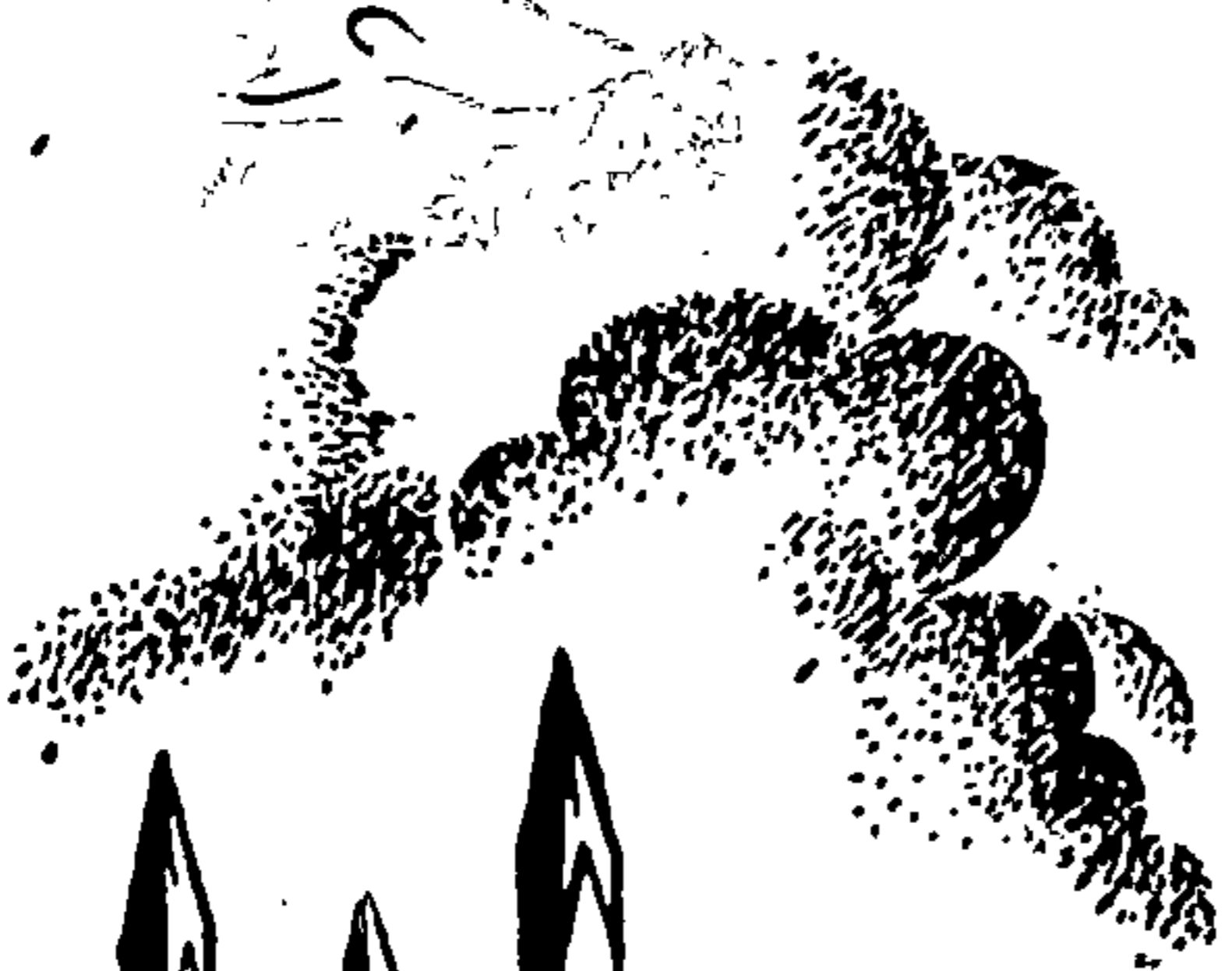
विषय

कव्य

सं. क्र.

००३

२५



आनंदी



REFBK-0011993



राष्ट्रिय विश्व

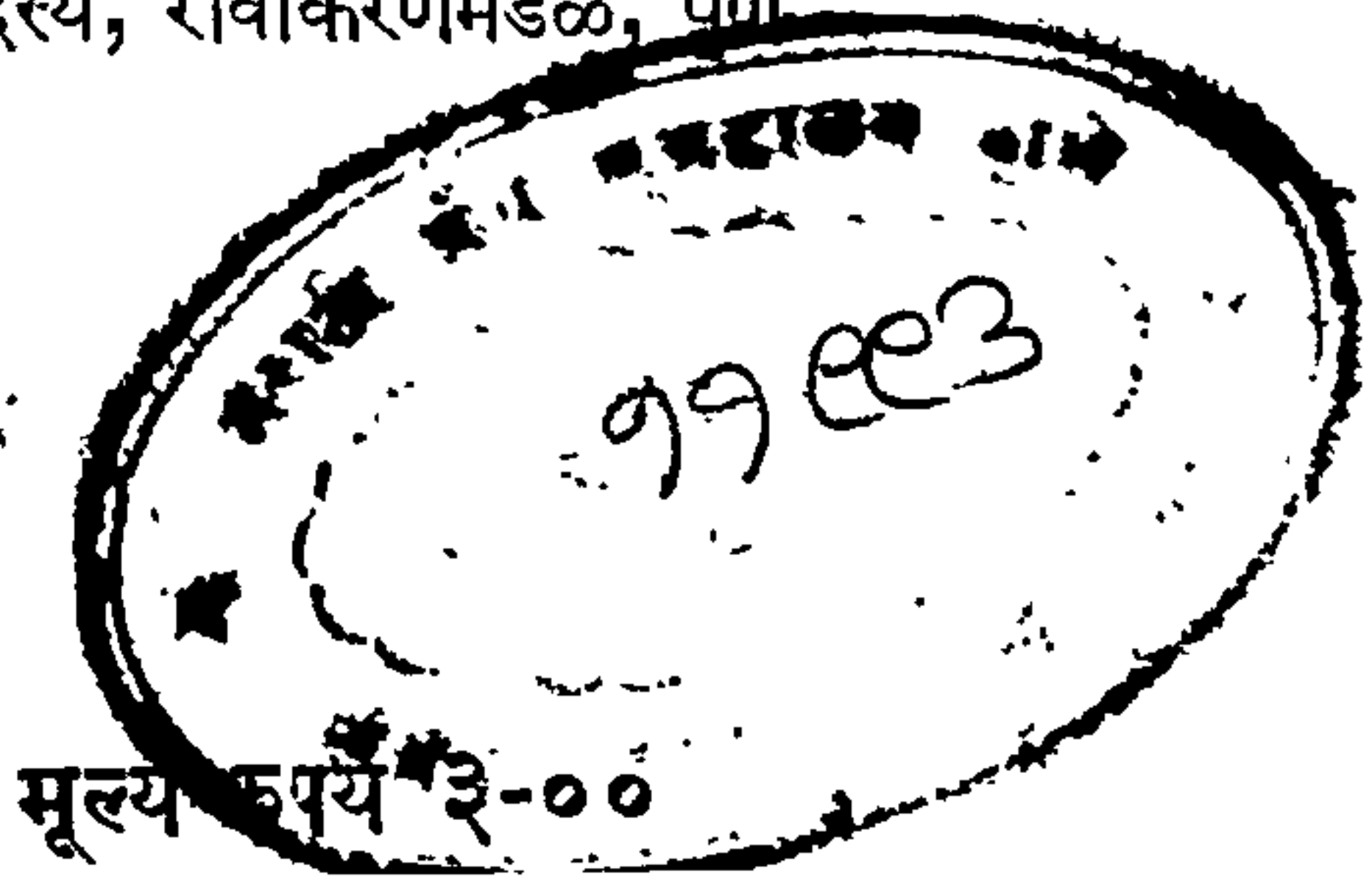
रविकिरणमंडळाचे ४५ वे पुस्तक

श्री नैरी चांदणें

(स्फुट कवितासंग्रह ६ वा)

गिरीश

सदस्य, रविकिरणमंडळ, पुणे



REFBK-0011993

व्ही न स प्र का श न : पु णें

आवृत्ति पहिली
जानेवारी १९६१

कवितांचे सर्व हक्क लेखकाकडे
व
प्रकाशनाचे सर्व हक्क प्रकाशकाकडे

चित्रकार : पाथरकर

प्रकाशक :

स. कृ. पाध्ये

व्हीनस प्रकाशन

४१० शनवार पेठ : पुणे २

मुद्रक :

गं. शं. दाते

कलागृह छापखाना

६६६ सदाशिव पेठ : पुणे २

प्रिय

श्री. प्रभाकर श्रीपत शेणोलीकर ऊर्फ अबा

व

श्री. जानकीबाई प्र. शेणोलीकर ऊर्फ यमू

यांश

विहार

माझ्या स्फुट कवितांचा हा ६ वा संग्रह आहे. यांत १९५० ते १९६० या कालखंडांतील वैयक्तिक व सामाजिक जीवनांतील अनेक घटना चित्रित झाल्या आहेत. विशेषतः महाराष्ट्र-जीवनांतील संस्कार, शेतकरीजीवन, वैयक्तिक मनीषा, लोकशाही वृत्ति, दुरवस्था, सामाजिक समस्या, ऐतिहासिक व यंत्रयुगीन घटना, थोर व्यक्ति, श्रेष्ठ कलावंत, बालजीवनांतील छोटे प्रसंग किंवा अंतर्मुखतेतील कांहीं तरंग या विषयांवरील भाव यांतून व्यक्त करण्याचा नम्र प्रयत्न आहे.

कवितेत जुने-नवे असे कांही असू शकत नाही; तथापि मराठी कविता ही आज छंद, आशय व रचना या दृष्टींनी निराळी वाटचाल करित आहे. ती विविधांगी व विविधरूपिणी होत आहे. मात्र ती केवळ बुद्धिजीवी होईल की काय अशी शंकाहि कधीकधी मनांत येते ! सौंदर्य हे भावजीवि असते; म्हणून सौंदर्यजीवी दृष्टीला जेवढे दिसले, तेवढेच टिपून घेऊन ते आज मी रसिकांच्या सेवेला नम्रपणे हजर करित आहे.

माझे विद्यार्थिमित्र श्री. स. कृ. पाध्ये हे आज या काव्यसंग्रहाचे प्रकाशन करित आहेत. मुद्रण व चित्रण यांची संजावट अनुक्रमे श्री. दाते व श्री. पाथरकर यांनी केली आहे. मी या सर्वांचा आभारी आहे.

दि. १६ नोव्हेंबर १९६०
विश्रामबाग, सांगली

गिरीश

अनुक्रम

| | | | |
|-------------------------------------|-------|-------|----|
| १ सोनेरी चांदणें | | | १ |
| २ जीर्णोद्धार | | | ३ |
| ३ आले मोती गेले मोती | | | ६ |
| ४ गंगाभाग्य | | | ८ |
| ५ आम्रवृक्षास | | | ९ |
| ६ रसिकरंग | | | १० |
| ७ कांतीचें निशाण | | | १२ |
| ८ सप्तपदी | | | १३ |
| ९ प्रियदर्शन | | | १५ |
| १० अंगाई | | | १६ |
| ११ वियोगिनीने के. अभिनंदन | | | १८ |
| १२ धणी | | | १९ |
| १३ प्रळयंकरा | | | २० |
| १४ मनीषा | | | २२ |
| १५ गृहप्रवेश | | | २४ |
| १६ विमामहर्षि | | | २६ |
| १७ सोलीव सुख | | | २८ |
| १८ दीपिका | | | २९ |
| १९ वाढदिवसाची भेट | | | ३१ |
| २० शारदेच्या दरबारांत पं. नेहरू | | | ३३ |
| २१ लक्ष्मीपूजन | | | ३५ |
| २२ शेवटचा पाठ | | | ३५ |
| २३ अनुभूतीनो | | | ३९ |
| २४ श्रीज्ञानेश्वरांच्या पायांशीं... | | | ४० |
| २५ देवलांच्या मळ्यांतील कल्पवृक्षास | | | ४२ |

| | | | |
|----|---|-----|----|
| २६ | कविवर्य द. रा. वैद्रे यांस ... | ... | ४३ |
| २७ | श्रेष्ठ कलावंत गोविंदराव टेंबे यांस ... | ... | ४५ |
| २८ | लोकशाही राणा ... | ... | ४७ |
| २९ | नवीन शक-वर्ष ... | ... | ४९ |
| ३० | कमळण ... | ... | ५२ |
| ३१ | भाऊबिजेची भेट ... | ... | ५३ |
| ३२ | प्रतापगडार्चे सौभाग्य ... | ... | ५४ |
| ३३ | पूजा ... | ... | ५८ |
| ३४ | नंदादीप ... | ... | ६० |
| ३५ | गुन्हेगार बालकें ... | ... | ६२ |
| ३६ | विज्ञाना ... | ... | ६३ |
| ३७ | सोनपाकळी ... | ... | ६४ |
| ३८ | पंचारती ... | ... | ६६ |
| ३९ | वृंदावनांतील तुळस ... | ... | ६८ |
| ४० | सहवास तुझा ... | ... | ७० |
| ४१ | धन्य देवि तूं ... | ... | ७२ |
| ४२ | संपत् शुक्रवार ... | ... | ७४ |
| ४३ | वासंतिक किमया ... | ... | ७५ |
| ४४ | जीवनास्वाद ... | ... | ७६ |
| ४५ | मंगल कलश ... | ... | ७७ |
| ४६ | भिलईच्या यंत्रविशारदास.... | ... | ७९ |
| ४७ | श्रीरामकृष्ण आश्रमांत जाण्यापूर्वी ... | ... | ८१ |
| ४८ | श्रीरामकृष्णमंदिरांत ... | ... | ८२ |
| ४९ | श्रीविवेकानंदमंदिरांत ... | ... | ८३ |
| ५० | श्रीविवेकानंदनिवासमंदिरांत ... | ... | ८४ |
| ५१ | चामरें ... | ... | ८५ |
| ५२ | धर्मभानू ... | ... | ८७ |

| | | | | |
|----|--------------------------------|------|-----|-----|
| ५३ | जय महाराष्ट्र | ... | ... | ८९ |
| ५४ | प्रियमित्र कवि यशवंत यांस | ... | ... | ९१ |
| ५५ | महाराष्ट्रगीत | ... | ... | ९२ |
| ५६ | ये मंगल महाराष्ट्रा | ... | ... | ९३ |
| ५७ | एका प्रपंचविदुषीस | ... | ... | ९६ |
| ५८ | नागपंचमीचा हिंदोळा | ... | ... | ९८ |
| ५९ | तरंगीणीची जन्मकथा | ... | ... | १०० |
| ६० | रसमेघ | ... | ... | १०२ |
| ६१ | दोन रोपें | | ... | १०४ |
| ६२ | शेंगदाणा | ... | ... | १०६ |
| ६३ | नामाची सारंगी | ... | ... | १०८ |
| | स्पष्टीकरणार्थ संदर्भ व टीपा | ... | ... | १०९ |
| | 'सोनेरी चांदणें' मधील छंदोरचना | ... | ... | १२१ |
| | पहिल्या ओळींची सूचि | ... | ... | १२४ |

* * *

सोनेरी चांदणें

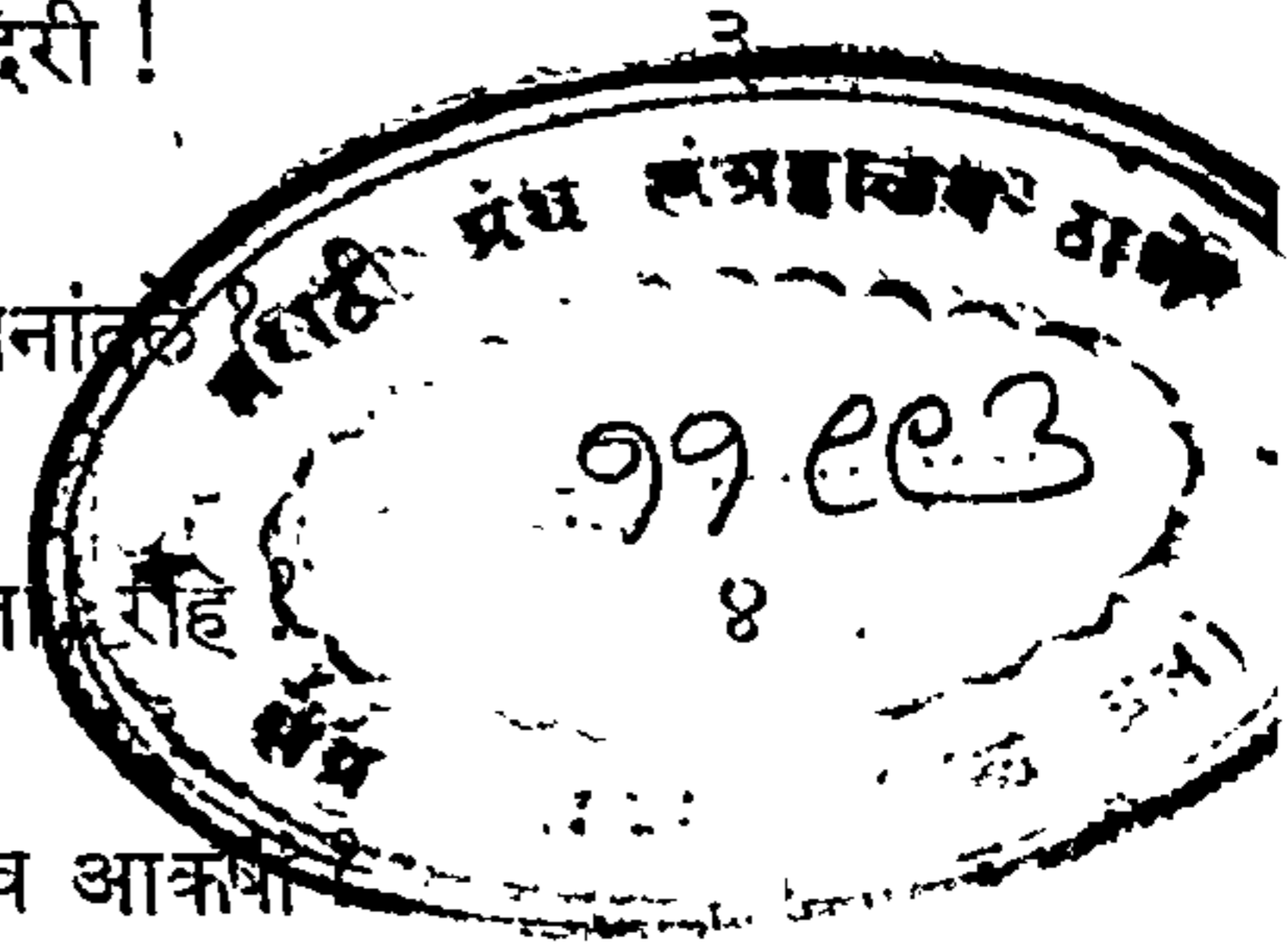
१ सोनेरी चांदणें

जाति-पादाकुलक

टोल्यामागुन बसतां टोले,
चेंडू सप्सप् जाती येती;
भाद्रपदाची सुरंग सृष्टी-
आणि पाखरें त्यांत रंगतीं ! १

मावळतीचीं किरणें कोमल,
दूरिल डोंगरसरींमधूनी-
भेटुन जातीं पूर्वाकाशीं,
इंद्रधनुष्यां जादु उठवुनी ! २

आणि कोवळीं, पिवळीं, सुंदर-
विद्यालयिच्या मनोन्यांवरी-
उन्हें लपेटुन शिखरां-शिखरां,
दर्या दाखविती चंदेरी !
की सोनेरी चांदणेंच हें ?
स्वप्न मधुर वा जीवनांतले
किंवा संगीताची छाया-
राग आळवुन होत राहिले
किंवा पाहिल्या प्रेमाची ही-
दिव्य मोहिनी जिव आकषा
साकाराया ध्येय कुणी वा-
किमया पसरी मधुर, महर्षी ? ५



१ विलिंग्डन महाविद्यालय सांगली.

| | |
|-------------------------------|----|
| स्मितें निरागस कुणी कंचनी— | |
| फेकि सरिंच्या तालावरती; | |
| सोनसागरा म्हणून आली— | |
| कोमल सोनेरी ही भरती ? | ६ |
| चित्रकलेची फिरे कुंचली— | |
| नभःपटावर रंग उभवुनी, | |
| आदर्श नवा नव्या जगाला— | |
| भव्योज्ज्वल वा देइ निर्मुनी ? | ७ |
| शिल्पामधल्या उदात्तसुंदर— | |
| ळयींतलीं वा मधुर वाकर्णे, | |
| रंगारंगांतून थाटुनी | |
| प्रतिभाशाली दाविति लेणें ? | ८ |
| परी अरेरे ! फिकट जाहलीं, | |
| काजळलीं स्वप्ने सोनेरी !! | |
| चेंडू करिचे चुकले, हुकले ! | |
| ध्येय बुडे की असेंच तिमिरीं ! | ९ |
| खेळ खेळतां, पळभर तरि हें— | |
| ‘ सोनेरी चांदणें ’ चमकलें, | |
| ‘ स्वप्नभूमि ही नवी उभवुनी, | |
| हें न थोडकें जीवन इथलें ! | १० |

* * *

१२ ऑक्टोबर १९५०

विश्रामबाग, सांगली.

- भग्न जाहलें विशाल मंदिर !
 वीज पड्दनी चिरे निखळले !
 सुरंग अथवा कुणी लाविले !
 ढिगारेच कोसळले भूवर ! १
- गाभान्यांतच कळस गाडला !
 दगडी अवजड ओझ्याखाली-
 ठिकन्या होउन मूर्त भंगली-
 शिल्पाला ये घोर अवकळा ! २
- चुनखड धुतली वर्षासरिने !
 हिमवर्षाने दगड गोठले !
 तप्त उन्हांनी खांब उकलले !
 फटीत घुमलीं पिशाचगानें ! ३
- शिल्पकार कुणि तिथे पातला !
 कलात्मतेची ओढ लागुनी-
 अंतर आणी त्यास खेचुनी !
 पुशित आसवें मुग्ध थांबला ! ४
- विशाल दृष्टी फिरली भवती,
 नीलाकाशीं उंच भरारे,
 ग्रेरक कांही दिसलें वारें,
 टाकि चालवी दगडावरती ! ५

पोट बांधुनी काम चालवी !

कुणि वेड्यांतच त्यास काढले !

कुणि कानूनी त्यास नाडले !

परि दे रूपें दगडांस नवीं !

६

एटबाज तों पोशाखाचे—

वन्यविहारा युवयुवतीजन—

खिदळत आले मोटारींतुन;

तन्हेदार किति झोक तयांचे !

७

आरामाचें झालें भोजन;

छायाचित्रें भग्न शिळ्यांवर—

घेउन झालीं कलामनोहर !

आनंदाने करिती विहरण !

८

शिल्पघडणिची ऐकून टाकी,

“ व्यर्थ परिश्रम ”—म्हणाति—“ कशाला—

घेसीं मंदिर उभवायाला ?

उध्वस्त असें देउळ राखी ! ”

९

“ उध्वस्त न का ऐसें जीवन ?

प्रतीक त्याचे पहा ढिगारे !

भग्नशांचीं हीं खिडारें !

कलेस रुचतें वास्तवभीषण !

१०

उध्वस्त असें जीवन अमुचें ! ”—

वदुन तयांनी श्वास सोडिले !

डोळे मिस्कलतेने हसले !
स्तिमित चित्त हो शिल्पज्ञाचें !!

११

नजर तयांच्या आरामांवर-

भ्रूसंकोचे भेदक फेकी;
निःश्वासुन घे हार्ती टाकी,
भुकाळपोटीं घडवी फत्तर !

१२

१२ ऑगस्ट १९५०
विश्रामबाग, सांगली

३. आले मोती, गेले मोती !

जाति-पदाकुलक

सरी मृगाच्या वीसंझनी,

मवारलीं लोण्यासम रानें,

घातांमधलीं नवीन बीजें-

येतीं अंकुरुनी बहराने ! १

विभिन्न रूपीं सौख्य नटावें,

ल्यापरि पाउस-ऊन्ह येउनी,

तुषार सुंदर तेजस्वी कण-

भरवुनि, वाढविती जणुं जननी ! २

स्वातिबिंदुनी टपोर मोती-

शिंपल्यामधे सुढाळ होती;

पिकें शिवारीं तरारलेलीं-

भाग्यशालिनी दाविति खोती. ३

जिवाशिवांचीं खळीं लागलीं-

। धान्य मळाया नव अपुलालें;

राशी शिगल्या, ठिचलीं पोतीं,

कृषिदेवीने भाग्य ओतलें ! ४

जिवा म्हणे-" श्रम सारे फळले !

सुखांत नांदूं या वर्षभरी ! "

शिवा म्हणे-" हीं बायापोरें

लेतिल, खातिल पोटभर तरी ! " ५

यांत दिसलीं स्वप्ने सुंदर;

इर्जिक झाली आनंदाची;

भाविकालचें वैभव होतें—

धुमवित गाणीं खड्या सुरांची ! ६

ढिपळ्यांत सरी, तसे जिवाचे—

मोति शोषले व्याजापार्यां !

आणि शिवाचा ' काळा पैसा '

चैन जुगारित—भगळित जाई ! ७

१४ सप्टेंबर १९५०

विश्रामबाग, सांगली

४. गंगाभाग्य

छंद-अभंग

| | |
|---|---|
| चांदण्यांत कोण पसरी निखारे, गोडव्यांत खारें येई पाणी ! | १ |
| सोनेरी किरणीं ढगें घोर काळीं, फुलोऱ्यांत आळी वळवळे ! | २ |
| सुरेल रागांत विसंवादी स्वर, कोकिलेस खर साथ देई ! | ३ |
| कोवळिकेवर निष्ठुराचा चरा शबलाचा झरा निर्मळांत ! | ४ |
| शुद्ध सोनियाचे जन्मती न कण ? म्हणुनी का घण, अग्नि केले ! | ५ |
| अंगरूप कधी लाभे कर्पूराचें उन्हाळी पुराचें गंगाभाग्य ! | ६ |

* * *

१७ ऑक्टोबर १९५०

विश्रामबाग, सांगली

- वेधी मोहर, ये फुलोरुन जधी वासंत रंगांसेवे,
 रानीं गोड सुगंध ते कर्णिकर्णीं मारुनिया राहिले;
 जिह्वाग्रीं तरळे रसाळ फळिंचें माधुर्य गाभ्यांतलें !
 शोभे थोर कुळी किती तव वनीं त्या पूर्वींच्या वैभवे ! १
- आले कोकिल धावुनीं मधुरवे गाऊनि गाणें नवें !
 पाचूच्या घुमटामधे सुबकता-सौंदर्य विस्तारलें;
 आलापांतुन पंचम स्वर नवे वोसंडले, वाहिले !
 अंगा वेहुनि राहिली सहचरी गाळून मोदासवे. २
- आलीं बांडगुळें परी तनुवरी, कुर्वाळिसी त्यांजला
 वेली वेहुनि अन्य शोषिति तुला वाढून फांधांवरी,
 तूं ही नीरस, दुर्विदग्ध बनतां गेल्या सुधेच्या झरी !
 गेले कोकिल ! लोपलीं कुलयशें ! गाळी सखी ही जला ! ३
- वाटे ' विश्वच नासलें ' तुज ! कसा ब्रह्मा करी रंजन !
 पूर्वींच्या विभवस्मृतींतिल तरी लाभेल का अंजन ! ४

* * *

२५ नोव्हेंबर १९५०
 विश्रामबाग, सांगली

तो पहा -चालला रसिकरंग !
 विनम्रपणें खिळवून डोळे मूकपणें खाली !
 कसलें चिंतन चाललें तरी ?
 बाजूस गेले सरळलेले खळरस्ते दूर,
 वड, पिंपळ विशाल, पिंपणीं, बाजूस बागा,
 महाविद्यालय, बंगले, शेते हिरवीं, काळीं—
 जातीं मागे मागे आजूबाजूनी,
 आणि येऊनी आवेग पावलां—
 चाले तालांत, अंतरांतील—
 रसरागांच्या स्वरलहरांत !

चेहऱ्यावर चित्रपट किती प्रतिबिंबले !
 अंतरांगींच्या नव्या खळबळी,
 व्यापक मानवतेची भूक पोटीं,
 अन्नभुकेल्यांची आर्त करुणा,
 संस्कृतीचीं नवीं तेजस्वी क्षितिजे,
 वीणेचे जुने नवे झंकार,
 नंदनवनींचीं मंदारफुले,
 नक्षत्रफुलांची सुबक गुंफण,
 ओहळनद्यांचे मर्मरध्वनि,
 सागरांतलीं वा वारेवादळे,
 दैवघटनेचीं रेखीव दर्शनें,

आणि संसारींच्या करुण कहाण्या-
दिसती भावुक वदनावरी !

प्रतिकारशक्ति सात्त्विक सोशीक !
अग्निदाह वा सूर्याचे ताप,
सांसारिक झळा, यातना घोर-
शांतपणाने पचवून करी रसिकपणाने-
शीतळ, निर्मळ त्यांचे चांदणे आपुल्या स्पर्शे;
भावशब्दांच्या हजाऱ्यांतून शिंपीतसे भोतीं,
फवारून दिव्य अमृतधारा !

वेडितां अनिष्टे,
विस्तारून आत्मतत्त्वार्ची पंखे,
महान् होऊन त्यांच्यापरीसही,
झाकळून त्यांना, .
आत्मतेज हा झळाळवीत, नमवीत भूमी,
उद्यांचा प्रेरक, मानवतेचा प्रतिभावंत,
उद्यांच्या ध्येयांचा स्वप्नसाक्षात्कार-
लिहित मार्तीत जणू नेत्रतेजे,
अर्थगर्भतेने तीव्र भारावून,
विनम्रभावे, पहा चालला लोककवि हा रसिकरंग ! ४

* * *

१८ ऑगस्ट १९५१

विश्रामबाग, सांगली

७. क्रांतीचें निशाण

जाति—बांसरी

- क्रांतिचें निशाण आज उंच उंच उंचवा !
स्पर्शुनी ध्रुवास, उंच करुं चिरंत मानवा ! ध्रु० ॥
- तेज जरा वेदांतिल,
तेज कुराणामधील,
तेज अखिल धर्मांतिल आणुनीच मेळवा ! १
- काळ्यांतिल ऊर्मि जरा,
गोन्यांतिल शुद्ध झरा,
साक्षरानिरक्षरामधील भाव वाहवा ! २
- चपल वेग वायूंतुन,
जोम नदीवृक्षांतुन,
मनगटांत आणुनी हवेंत मूठ नाचवा ! ३
- ओढुनी खपुष्पतेज,
पाडुनि शशिरविस वेज,
उडुमाला गुंफुनिया या ध्वजास शोभवा ! ४
- निर्दाळुन उच्चनीच,
कारिं करास घेउनीच,
रक्तांतुन आपुलकी एक थोर खेळवा ! ५
- ध्वजमाला मग कशास—
वेगवेगळ्या, जगास ?
एक भाव, एक ध्रुव, एक रंग फडकवा ! ६

* * *

६ ऑक्टोबर १९५१

विश्रामबाग, सांगली

चल साखि, चालूं सात पावलें !

संसाराची चढण चढूनी

मंत्र म्हणूं या अंतरांतले ! ॥ ध० ॥

ढिगांवरी या पाउल ठेवुनि,

प्रतिपदिं हातीं हात धरूनी,

गोड करूं जे भाव भावले ! १

विजयाची तूं अनंतमाला,

सुखदुःखांतुन तरावयाला,

वंशरक्षणीं प्रेम लाभलें ! २

मातापितरें बंधुभगिनि वा,

गुरुजन दाविति मार्ग नवनवा,

ऋचांत त्यांच्या हृदय विंबलें ! ३

चतुरथांची जोड कराया,

‘ नातिचरामी ! ’ प्रेमें वहुं या,

वेदवचन हें महन्मंगले ! ४

वडीलधारीं भवतीं जमलीं,

आशीर्वचनीं वर्षति अंजलि,

सावरतिल हे तोल आपले ! ५

ध्रुवावरी या नजर लावुनी,

अंतरि जाऊं अढळ होउनी,

तेज सेवुनी वेदीवरलें ! ६

त्यागसुखाच्या संसाराने;

फुलवूं खेडीं, नगरें, रानें,

चल फेडूं ऋण जीवनांतलें

७

५ नोव्हेंबर १९५१

विश्रामबाग, सांगली

मंगल मधुमंजुळ कां नाद घुमत आले ?
रसरंगीं सृष्टिरूप नितळ नितळ झाले ! धु० ॥

आम्रांतुन मोहरल्या मंजिन्या हसून,
निळावंतिवर फुलले घोस बहारून !
किलबिलती साळुंक्या मंजुळ फांघांत,
कपिलेचे हुंबारे वासरुं गोठ्यांत !

प्रियदर्शनिं कवणाच्या नयन हे निवाले ! १

प्रियदर्शन बाळ आज भेटले जिवाला,
कान्हाच्या आगमने हर्ष गोकुळाला,
पालखांत निजवा ग हळुच नंदनाला,

होइल हें पावन घर रुमझुमतां वाळे ! २

फुलला संसारतरू डाहळीडहाळी,
बालचंद्र शोभा ही खुलवितसे भाळीं,
जीवनाश्रमास आज लाभली दिवाळी !
पारिजात हर्षाश्रू म्हणुन काय ढाळी !

सफल जीवनीं ऐशा हृदय, बाइ ! धाले ३

२८ जानेवारी १९५२

विश्रामबाग, सांगली

प्राजक्ताचा सडा अंगणीं झाला,
आकाशाने रसरंग शिंपला,
प्रियदर्शनाचा हात चिमुकला-

वेचाया धावला । जो जो ग बाई० १

थांबा, थांबा बाळ, कां अशी घाई !
पालखीं तुम्हांला ठेवीते आई,
रिझवील गानीं ही चंदाताई-

पाळणे म्हणूनी । जो जो ग बाई० २

ताईच्या हातचें औषधपाणी,
माईच्या हातचीं घ्या रासन्हाणीं,
आईच्या मायेचीं ऐकून गाणीं-

झोपा ना जरासे । जो जो ग बाई० ३

आईच्या हातचे खाऊन घास,
बाबांच्या ऐकून उपदेशास,
चंदाच्या मागून हळू जायास

उठा मग बाळ । जो जो ग बाई० ४

पाखरांच्या चोर्चीं घास भराया,
गायवासरांना चारा चाराया,
खळ्यावर नव्या राशी कराया-

जायचें तुम्हांला ! । जो जो ग बाई० ५

भूदळ हुकमी हालवायला,
सागरीं वा नौका चालवायला,
विमानें वा उंच भरारायला

भारतासाठी या ! । जो जो ग बाई० ६

ऐकूनिया गरीबांची कहाणी,
सर्वत्र शिंपून अमृतवाणी,
समृद्धीचें धावें जगास पाणी—

म्हणून जायाचें ! । जो जो ग बाई० ७

झोपा जरा शांत म्हणूनी बाळ !

वेळ येतां उठवीन वेल्हाळ !

भारताचा करावया सांभाळ—

पाठवीन तुम्हां ! । जो जो ग बाई० ८

२८ जानेवारी १९५२

विश्रामबाग, सांगली

सो. चां....२

१७

११. वियोगिनीने केलेले अभिनंदन !

वृत्त—वसंततिलका

- नाथा ! करांत कर घेउन धन्य केले,
हैं जीवनांत रमले मन रंगलेले;
झाला मनोज्ञ सहवास सदैव गोड,
ही लाभतां चरणिची मज पुण्य जोड ! १
- मार्गीच ओघ परि खंडित—हाय ! झाला,
की वाळवंट सरितेविण शोषलेला !
होतें सख्या ! परि तुझ्या हृदयांत खोल,
ठेवूनि जाय दुहितामिष दिव्य ओल ! २
- त्यांनी तुला रस दिला मम जीवनींचा,
पाहूनि भाव निवला मम अंतरींचा !
मी पूजिलें तुज मनोमय भावनेने,
मी शांतले तुजसर्वे दुहितासुखाने ! ३
- षष्ठ्याब्दिपूर्तिस तुझ्या जवळी बसून,
पुण्याहवाचन करीं कर हा धरून;
' देई शताब्द पतिला, मम कन्यकांना,
त्यांच्या पतीस ! '—विनवी कुलदेवतांना ! ४
- मी वायुरूप फिरले तुझिया सभोतीं;
तूझ्या सुखास्तव मनीं मज खंत होती !
' तूं धन्य होसि निजजीविनिं ! '—हैं बयून,
होऊन धन्य, सख्या ! परते हसून ! ५

* * *

२१ जून १९५२

विश्रामबाग, सांगली

| | |
|--|---|
| चंद्रिकेची कांती, नक्षत्राचें रूप, दिलें अपरूप सोनुल्यांना; | १ |
| लडिवाळ हासें, गोजिरें बोलणें, भरितीं हें जिणें अमृताने; | २ |
| ऊब जिव्हाळ्याची, गोड शीतळाई; वीणेची गौळाई भरे उरीं; | ३ |
| रम्य चित्रकला उषेची प्रभा वा, रंग भरी नवा शोभावंत. | ४ |
| वाटे हा संसार सुरेल संगीत, सोनुल्यांची प्रीत लुटतांना ! | ५ |
| लुटींत या तूझा परतत्वस्पर्श, रसिकर्त्वीं हर्ष थोर लाभे; | ६ |
| तरी चरणाशीं गोड आळवणी, पुरवावी धणी गोड हीच— | ७ |
| ‘ रस घेत यांचा अखंड मनाशीं, तुझ्या चरणाशीं यावें आम्ही ! ’ | ८ |

* * *

३ जुलै १९५२

विश्रामबाग, सांगली

११. वियोगिनीने केलेले अभिनंदन !

वृत्त—वसंततिलका

नाथा ! करांत कर घेउन धन्य केले,
हे जीवनांत रमले मन रंगलेले;
झाला मनोज्ञ सहवास सदैव गोड,
ही लाभतां चरणिची मज पुण्य जोड ! १

मार्गीच ओघ परि खंडित—हाय ! झाला,
की वाळवंट सरितेविण शोषलेला !
होते सख्या ! परि तुझ्या हृदयांत खोल,
ठेवूनि जाय दुहितामिष दिव्य ओल ! २

त्यांनी तुला रस दिला मम जीवनींचा,
पाहूनि भाव निवला मम अंतरींचा !
मी पूजिले तुज मनोमय भावनेने,
मी शांतले तुजसर्वे दुहितासुखाने ! ३

षष्ठ्याब्दिपूर्तिस तुझ्या जवळी बसून,
पुण्याहवाचन करीं कर हा धरून;
'देई शताब्द पतिला, मम कन्यकांना,
त्यांच्या पतीस !'—विनवी कुलदेवतांना ! ४

मी वायुरूप फिरले तुझिया सभोर्ती;
तुझ्या सुखास्तव मनीं मज खंत होती !
'तूं धन्य होसि निजजीवनिं !'—हे बघून,
होऊन धन्य, सख्या ! परते हसून ! ५

* * *

२१ जून १९५२
विश्रामबाग, सांगली

| | |
|---|---|
| चंद्रिकेची कांती, नक्षत्राचें रूप, दिलें अपरूप सोनुल्यांना; | १ |
| लडिवाळ हासें, गोजिरे बोलणें, भरितीं हें जिणें अमृताने; | २ |
| ऊब जिव्हाळ्याची, गोड शीतळाई; वीणेची गौलाई भरे उरीं; | ३ |
| रम्य चित्रकला उषेची प्रभा वा, रंग भरी नवा शोभावंत. | ४ |
| वाटे हा संसार सुरेल संगीत, सोनुल्यांची प्रीत लुटतांना ! | ५ |
| लुटींत या तूझा परतत्वस्पर्श, रसिकर्त्वीं हर्ष थोर लाभे; | ६ |
| तरी चरणाशीं गोड आळवणी, पुरवावी धणी गोड हीच— | ७ |
| ‘ रस घेत यांचा अखंड मनार्शीं, तुझ्या चरणाशीं यावें आम्ही ! ’ | ८ |

* * *

३ जुलै १९५२

विश्रामबाग, सांगली

- सूर्या, उघड सर्व तव डोळे !
 सोसवें न हें दैन्य, जाउं दे राख होउनी सगळें ॥ ध्रु० ॥
 तडफडती हे अन्नमुकेले !
 जीवन अगतिक होऊन गेलें !
 माणुसकीला सोडी, तो सुखशय्येवरती लोळे ! १
- मदांध सत्ताधारी फिरती !
 मार्गी शत्रूपरि वावरती !
 निर्घृण हसती, चिरडुन पायीं गरिब विचारे भोळे ! २
- ध्येयशून्यता सर्व पसरली !
 महात्मतेचीं तेजें सरलीं !
 ऋचा मुखाने घोषित मन हें स्वार्थांतच आंदोळे ! ३
- शेजाव्यांच्या रक्तावरती-
 हपापलेलीं पोटे भरतीं !
 खाटिकखाने हसत तोळती नरमांसाचे गोळे ! ४
- संस्कृतिलाही असे ताजवा,
 प्रतिष्ठेस ये अर्थ नवनवा !
 तेजस्वी स्त्रीजीवन पूर्विल निजतेजेही पोळे ! ! ५
- क्रशास जगणें असल्या जगती,
 आग सोसुनी ही धगधगती !
 त्या परीस तव रसरसणारें बिंब बरें वाटोळें ! ६

प्रळयंकर तूं, जीवनदायी !
शक्ति उभय या तुझ्याच ठायीं !
निघेल भाजुन भूमि, जर तुझा प्रखर किरणही वोळे !

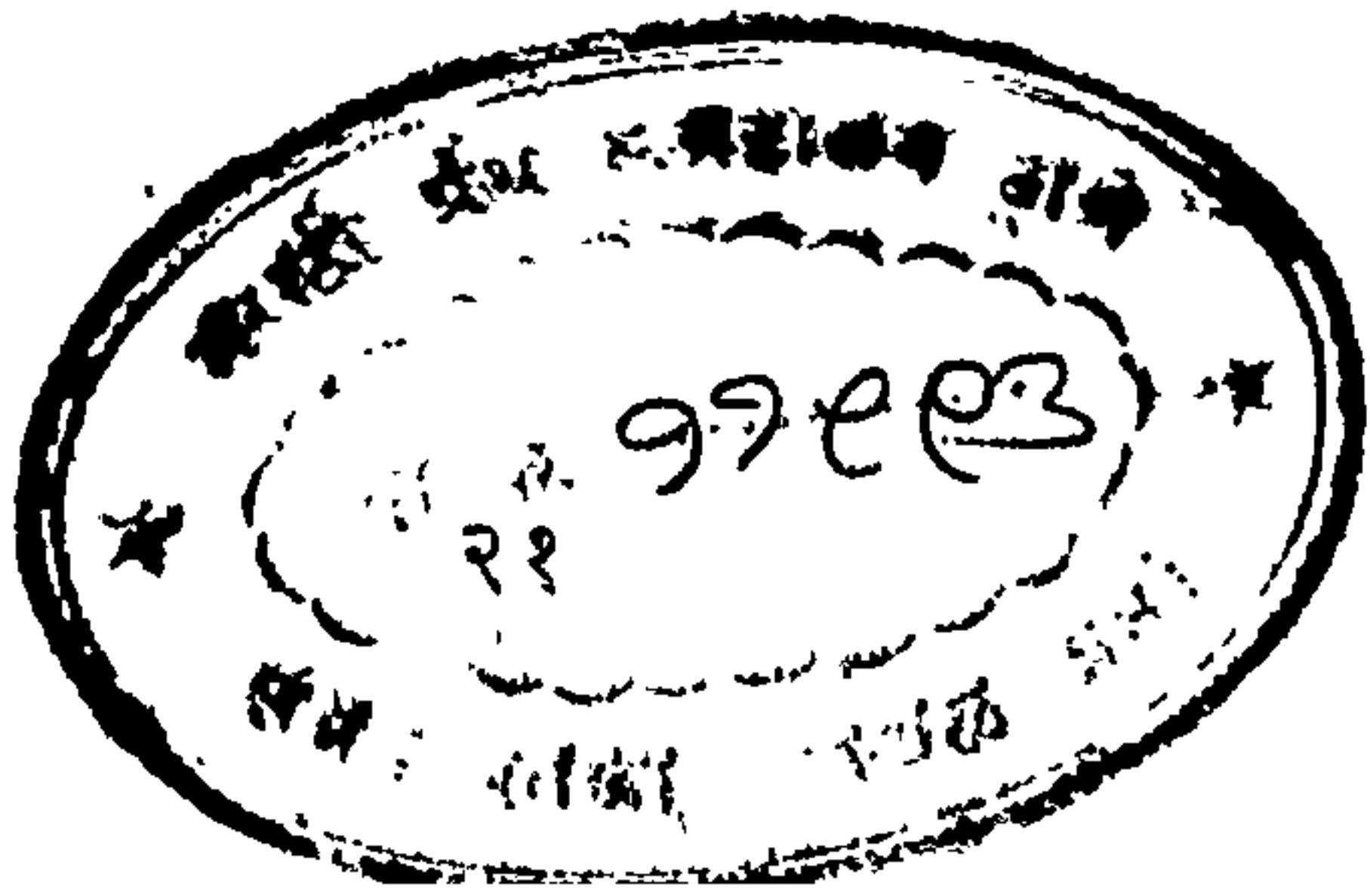
७

शांत शांत मग होइल सारें !
मेघ सोडितिल नवे फवारे !
अंकुरतिल नव बीजें, मिळतां सोनरी कर कोळे !

८

* * *

८ सप्टेंबर १९५२
विश्रामबाग, सांगली



गतिमान नदासम मी व्हावें
फोफावत पुढती नित जावें ॥ धु० ॥

कधी घेउनी डोंगरांतलीं—
मायघरांतिल जळें आपुलीं,
स्नेहल नदिचीं, ओहळांतलीं,
रान भिजवुनी फुलवावें ! १

वर्षतूचे ढग विरघळतिल,
आकाशींच्या गंगा गळतिल,
कधी विजांनी झरे उफळतिल,
अमृत तें मी रिचवावें ! २

कस मातींतिल, जीवन आंतिल,
तेज रवितले, प्राण वायुंतिल,
विशालता या आकाशांतिल,
देत शिवारा जिववावें ! ३

दुःखीं कढलीं दीन आसवें,
आनंदांतिल अश्रुकालवे,
रसारसांतिल भाव नवनवे—
मिळवुन, द्यावे ओलावे ! ४

पुढे पुढे मी क्षितिजापाठीं,
ओढ लागुनी नवतेसाठी,
जुनी वाहुनी संस्कृतिसाठी,
खंड नवनवे शोधावे !

५

ताऱ्यांचें आकर्षुन पाणी,
सरस्वतीची भूगत वाणी,
मिळवुन माझी तींत कहाणी,
बाग नवे मी उठवावे !

६

कष्टुन कष्टुन कणाक्षणाने-
तृप्ति मिळविली जी अभिमाने,
करुन मानवा तिचीं तर्पणें,
पराविया सुखिं विरमावें !

७

२८ ऑक्टोबर १९५३
विश्रामबाग, सांगली

ये आंत कलंडुनि माप उंबन्यांतलें,
तव पदार्पणींच तरारे साफल्य जीवनांतलें ! ॥ ध्रु० ॥

चतुर्थ आज मीनले,
घर त्यांनी शृंगारिलें,
मांगल्य त्यांतुनी आलें सजवाया दोन्ही कुलें ! १

पुण्याई जी साठली,
तव मार्गावर सिंचिलीं,
उमळलीं विमल भावांचीं त्यांतून सुगंधी फुलें ! २

गुरुवचनदीप मिळवुनी,
ठविले पथीं उजळुनी,
अनमोल सुवर्णकणांनी अणु अणु हे तेजाळले ! ३

शिणभार तीव्र सोसला,
शिणगार तोच जाहला,
शोभिवंत केलें त्यांनी फुलवुनी नवीं उत्पलें ! ४

संस्कार शुद्ध मिळवुनी,
मापांत दिलें ठेवुनी,
विखुरतिल माणकें त्यांचीं स्पर्शतां तुझीं पावलें ! ५

ही वेंच आसवांजली,
मायेच्या डोळ्यांतली,
होऊन त्यांचे मोती सजवितील घर आपुलें ! ६

समृद्धि पातली जणूं,
कुलदेवताच वा म्हणूं,
जीवनास देई शांती फेकुनिया स्मितमंगलें !

७

* * *

७३८१८
१९४३
कार्य
४-३-७९

२५ एप्रिल १९५३
सातारा

| | |
|---|----|
| सह्यगिरीचीं तपोवनें तूं डोळां न्याहाळुनी, | |
| अश्रू टिपले दीनजनांचे, राहुनिया चिंतनीं ! | १ |
| कष्टुन कष्टुन जीवनांतला अर्थ थोर शोधिला, | |
| सुवर्णजळ शोधाया भूमिस कान जरा लाविला. | २ |
| खळखळणारा सुवर्णसरितारव कानीं पातला, | |
| तपोबलाची कुबडीं स्पर्शुन दगड तुवां उलथला ! | ३ |
| पवित्र झाली ' शाहूनगरी ' उफळुन येतां झरा, | |
| भूमिभूमिंतील सुवर्णगंगा खालुनि ये निर्भरा ! | ४ |
| भगरिथाने आकाशींची गंगा आणुनि नवी- | |
| सजीव केलीं सगरबालकें भूमीवर मानवी; | ५ |
| तुवां आणुनी पाताळांतिल सुवर्णगंगा तशी, | |
| मृतप्राय ही भूमि पिकविली सुंदर बावनकशी ! | ६ |
| आणि काळवे काढुन, नेलें पाणी तूं भारतीं, | |
| अलिप्त राहुन करि हें सारें तव जनसेवारती ! | ७ |
| गुरुपद आलें तव चरणाशीं चालुन अर्थांतलें, | |
| धर्म, काम वा मोक्ष रंगुनी त्यांतच सामावले ! | ८ |
| एक साधुनी अनेक पदिंची किमया तूं साधिली, | |
| समृद्धिची ही जीवनगंगा म्हणुन येथ पातली ! | ९ |
| चिरंत बसुनी मग्न चिंतनीं तिच्याच तीरावरी, | |
| वीतराग तव निर्मळ मानस दिव्य साधना करी. | १० |
| आणि एक दिन सामर्थ्ये हों अर्पुन जनतापदीं, | |
| विसर्जिलें तूं जिणें महर्षे ! ध्येयब्रह्मामधी ! | ११ |

नव लाखांच्या अश्रूंनी तव समाधि अभिषेकिली !
दृत्सुमनांनी अनंत तव ही शेज किती सजविली ! १२
तपोभूमिवर म्हणुनि बैसुनी ध्यान आळवूं तुझे !
' निकेतनी ' या तुझ्या बटाचें बीज अंतरीं रुजे ! १३

३१ मे १९५३

विश्रामबाग, सांगली

१७. सोलीव सुख !

छंद-अभंग

| | |
|--|---|
| थोर नामीं तुझ्या लावूनिया रति, करावी आरती तुझी वाटे. | १ |
| शारदीय चंद्रकळेंतून आग- वर्षतांच, मार्ग कुंठती हे ! | २ |
| फुलांमधे अग्नी, हिमांत निखारे, जळांत वाफारे उफाळती ! | ३ |
| सुखी संसारींही आगीचा हा डोंब ! करपवी कोंभ जीवनींचा ! | ४ |
| शांतिस्थानें जीं जीं समजलों थोर, त्यांनीच हा घोर लावियेला ! | ५ |
| आटवून आता म्हणूनी हें रक्त, होऊनिया भक्त तुझा राही. | ६ |
| शांतीची बांसरी वाजे तुझ्या नामीं त्याच स्वरब्रह्मीं लय लागे ! | ७ |
| सोलीव सुखाचे विशुद्ध जिव्हाळे, सेवितों सोहाळे म्हणूनी मी ! | ८ |

* * *

१६ जून १९५३

विश्रामबाग, सांगली

स्नेहल, स्नेहल दीपिका जिवाची !
सुवर्णचंद्रिका तूंच अंतराची ! ॥ ध्रु० ॥

होतों यौवनाच्या देहलीवरती,
नव्या रम्यतेची सेवीत भरती;
अंगप्रत्यंगांत भाव भाव दाटे,
शहारले अंगीं गोड गोड कांटे !
छटा चहूकडे खुले गुलाबाची ! १

कोवळीक माझ्या भरली अंतरीं,
नव्या नवलांच्या लहरी लहरी !
स्वप्तरंगांचा भवतीं महाल-
उभवून, आंत वावरे खुशाल !
पाजळून तेजे माझिया ध्येयाचीं ! २

आणि अंधारलें भोतीं अकस्मात !
आकाशांतली ही काजळली वात !
गजबज झाली मनीं, अंतराळीं,
लोपतांच स्वप्ने सारीं अंतराळीं !!
प्रगटलीस तों देवता तेजाची ! ३

शांत तेज तुझे जणूं नंदादीप !
जीवनमंदिरीं तेवला समीप !

नव्हे, आकाशींची तारका पातली,
मार्ग दावायाला वरून धावली !
बहरली तान की दीपरागाची ! ४

स्नेहांतून तुझ्या तेजाळले भाव,
अष्ट सात्विकांचा घेऊनिया ठाव !
भले-बुरे तुझ्या तेजांत न्यहाळी,
संकटे अंधार कोसळतां भाळीं !
निकषली प्रत अग्नींत सोन्याची ! ५

यौवन धगीने जरी करपले,
अंतरीं चैतन्य नव उमलले !
गुलाबी ध्येयें तीं पुन्हा फुलोरलीं !
चिर तरुणाची वृत्ति मोहरली !
जादू ऐशी तुझ्या दिव्य सामर्थ्याची ! ६

गुलाब ! गुलाब आता भोवतालीं !
सुगंधांचीं तळीं हवेत साचलीं !
भरभरूनिया त्यांच्याच अंजली,
देइन तयांना ज्यांची ही सांडली !
अखंड उजळी ज्योत सौंदर्याची ! ७

* * *

२१ ऑक्टोबर १९५३
विश्रामबाग, सांगली

तव वाढदिवस हा आज सातवा, बाळा !
करितात म्हणुनि हे सवंगडी सोहाळा ! ॥ धु० ॥

ही चिव चिव चिमणी किलबिलते मधु गाणी !
ही सालुंक्यांची घुमते मंजुळ वाणी !
फडकावुन भारद्वाज सुनेरी पंख,
शुभदर्शन घाया आला बघ निःशंक !
ही मनी करूनी ' म्यांव म्यांव ! ' घोटाळे,
शेपटी उभारुन, कुरवाळुन करि चाळे !
हा मोत्या हुंगुन हुंगुन तव की गाल,
तुज विचारीतसे—' हसतां कां ? सांगाल ? ' १

हे अप्पा देती नवीन आणुनि बूक,
हे दादा देती आणुनि तुज बंदूक !
ही आई देते खाउपुडा तव हार्ती,
ही माई आणी टांगा तुझियासाठी !
ही काकांनी तुज पाठविली मोटार,
हे मित्र पुस्तके देती सुंदर फार !

कुणि कांही कांही तुज देतात बघून,
भावंडें गेलीं तव हीं हिरमूसून,
घायला अपुल्याजवळी वस्तु न कांही,
या खिन्न विचारें जो तो भवती पाही !

३

सरसावुन भावंडें तों जवळीं येतीं,
गालांचे पापे हळूच देतीं- घेतीं !

४

* * *

२६ नोव्हेंबर १९५३
सांगली

दरवार भव्य हा सरस्वतीचा भरला,
झंकार मराठी दिशादिशांतुन फिरला !
अमृतातें पैजा जिंकाया जणुं येई,
खळखळुनि शरदऋतु तोंच तुम्ही अवतरलां ! १

लडिवाळ बालकें कुणि उंचावुनि हात,
अडवितां बोलुनी मंजुळ वच, मार्गांत,
कुरवाळुनि त्याचे मधुर हासरे गाल,
थोपटून किंचित् कुतुकें मग आलांत ! २

देवदूत किंवा वरुन उतरलां खाली ?
की गंधर्वाची स्वारी इकडे वळली ?
रूपांतर झालें धरणीचें स्वर्गांत ?
स्वरभावांची कणकणास रंगत आली ! ३

की विष्णु उतरले कमळ घेउनी नुसतें,—
कोवळीक ज्यांतुन वोसंझनी फुलते ?
शासनार्थ धरिलें शस्त्र कोवळें हातीं,
ज्यांतून उद्याचें विश्व हळूच उमलतें ! ४

की वसिष्ठ आला रामराज्य राखाया,
अदृश्य पाठिशीं कामधेनुची काया ?
कुणि विश्वामित्रच असती शबल तपस्वी,
ब्रह्मर्षी अपुल्या स्पर्शें त्यास कराया ! ५

परतत्त्वस्पर्शीं भाव ज्ञानेशाचा ?
रससिद्ध उमाळा निर्मळ वा नाम्याचा ?
भारूड आर्त वा येइ एकनाथाचें !
की अभंग आला समर्थ हा तुकयाचा ?

६

ही कबीर-तुलसी-मिरा येशुची वाणी,
पूर्वापर संस्कृतिसंगम घडवुन आणी ?
तत्त्वज्ञ, संत, मुत्सद्दी थोर जगाचे—
होऊन एक, ही रसमय बोली न्हाणी !

७

उपनिषदे आलीं होउन वा साकार ?
नव गीता द्याया ये वा नव अवतार ?
की सुधाकराचा चंदेरीं रस आला,
ही शीतलतेची वर्षतसे तरि धार ?

८

ऊर्जस्वल करिते सरस्वती शंकार !
दे दिव्य रसध्वनि आशीर्वाद अपार ?
तव मराठमाई ! भाग्य उजळलें आज !
तव ओटी भरली सुभगे ! अपरंपार !

९

* * *

५ ऑक्टोबर १९५४
दिल्ली

सोन्यामोतीयाचें झालें न पूजन,
का ग हा विषाद ! काय तें जीवन ?
दिवाळी-पाडवा झाला न साजरा,
विषण्ण जाहला तरी कां चेहरा ?
हरवली कुडी हिऱ्यामाणकांची,
उदासीनिता कां तशी अंतराची ?

१

पहा ! पहा जरा कोण हें पातलें ?
वैभव घराचें आज तेजाळलें !
सोन्याची पुतळी पातली घराला,
' गृहलक्ष्मी ' आणी नव्या वैभवाला !
तेजाळले आज जीवनाचे कण,
सुवर्णाचे झाले सारे कणक्षण !

२

सुवर्णीं कळस चढविला यांनी;
जीवनमंदिर खुललें तयांनी !
ध्येयमूर्तीं झाली सगुण, साकार,
जीवनाचा खुले सुंदर प्राकार !
वावरे तयांत, करी पदन्यास,
डौलाने फुलून जीवनाची आस !

३

फिरेल घरांत जिथे हें पाऊल,
स्पर्शील जया ही सोनेरी चाहूल,
लाभेल निर्मळ जया हा दृक्पात,
पवित्र वा गंध मिळेल श्वासांत,
स्मितांतील जिथे सांडेल गोडवां,
मोहरेल तिथे पूजेचा पाडवा !

४

शब्दांतून सोनें, स्पर्शांतून सोनें,
रसांतून सोनें, रूपांतून सोनें,
गंधांतून सोनें शंभर नंबरी—
निघून, फाकेल सुप्रमा अंबरी !
चालत्या बोलत्या तरी या लक्ष्मीची,—
पूजा करूं सखे ! चल पाडव्याची !

५

* * *

१९ फेब्रुवारी १९५५

विश्रामबाग, सांगली

गेलों रंगुनि मी तुम्हां वितरतां काव्यातरंगांतले—

कांही पाठ, मनोज्ञता-विकसली उल्हासलेली मती !
होतें शेवटचेंच हें शिकविणें ! चित्तामधे दाटलें—

कांही काहुर ! आणि गूढ हृदयीं ओढी किती लागती ! १

झाले पाठ ! गतस्मृती तरळल्या डोळ्यांपुढे सांसव !

नेत्रा जीवन तो अबोध दिसलें सारें भविष्यांतलें !

अन् संसारकथा रसाळ कथिल्या; चर्चून घेतां चव—

आली तन्मयतेत रंगत नवी ! पेलें रिते जाहले ! २

बोळूनी उठलों, परंतु न निघे पाऊल तेथूनिया,

तों बाहेर दिसे प्रसन्न फुलली राणीलता, पौर्णिमा !

होऊनी हळवे तमांतुन पुढे ज्योतींत जाऊनिया—

आस्वादून, रसध्वनी मिळविला—या जीवनींची कमा ! ३

अश्रूनी भिजले निरोप ! वळलीं रेंगाळलीं पावलें !

झालें दर्शन-दिव्य ! अंतरिं तपःसाफल्य की पावलें ? ४

* * *

६ मार्च १९५५

विश्रामबाग, सांगली

२३. अनुभूतीनो - !

जति-पादाकुलक

- जीवन ऐसे भेडसावतें,
भेडसावतें, व्याकुळ करुनी !
आधण खळखळ आंत उकळतें !
चटके बसती जिव गुदमरुनी ! १
- कुणी जिवाचे तोडिति लचके !
कुणी परतती त्यास तव्यावर !
घोरांदर लाटांनी दचके,
दिसतां पुढती दृश्य भयंकर ! २
- किंवा आलीं मूर्त होउनी -
मनांतलीं हीं अगणित पापें ?
रौद्र-भयानक येति उफालुनि -
कुणी डिवचितां ? अंतर कांपे ! ३
- “ जीवन सुंदर ! ” - म्हणताचि आलों,
रसांतरांच्या अनुभूतींनी;
आनंदांनी त्यांच्या धालों,
उठाव केला तरि की यांनी ? ४
- रौद्रामधलें भीषण तांडव,
भयानकांतिल भयकर भीती,
करुणामधलें दुःखद मार्दव,
आर्त भाव हे आंतर पीती ! ५

किमया माझी परी अलौकिक,
घोट कटूही मी पचवीतो,
भक्त जीवनांतलाच भाविक,
पिउन हलाहल अमृत सृजतो ! ६

अनुभूती या उकळुन, उकळुन,
नेतो सुंदर रसपदवीला,
'ब्रह्मास्वादसहोदर' पीउन,
शंकर करितो मी सकलांला ! ७

अनुभूतींनो ! तुमची कसली -
भीति मला मग ? दावा जीवन !
देइन - वृत्ती जर समरसली -
कटुतेतुनही काव्यरसायन ! ८

* * *

२० ऑगस्ट १९५५
वैतरणा

- धन्य धन्य आज झालों,
चरणाशीं नम्र ठेलों ! १
- तुम्ही आणिलें दयाळा,
भोगावया हा सोहळा ! २
- लेकरूं तों काय करी;
माय आणी, बोट धरी. ३
- शमवुनिया वादळें,
शांत केलें मन बळें. ४
- ओढ लावुनी अंतरा,
आणिलेत आज घरा. ५
- सामर्थ्याचा भरवा घास,
पुरवा अंतरीची प्यास. ६
- भक्तीचें या अंगभर,
लेववावें वस्त्र थोर. ७
- शब्दकृतीतून सेवा,
बोलवावी, गुरुदेवा ! ८
- रक्तांतून कर्णी कर्णी,
खेळवावी तुमची धणी. ९

हीच मुक्ति, हेंचि फळ,
प्रेरणेने देई बळ, १०

हीच माझी दिव्य शांति,
धावी देवा ! हीच कांती ! ११

* * *

१९ सप्टेंबर १९५५
फलटण

२५ देवलाच्या मळ्यातील कल्पवृक्षास— !

गज्जल-मधुवाहिनी

- जाळींतुनी अवलोकितां हे कल्पवृक्षाचे तुरे,
मन रंगुनी त्यांच्यासवें, हृद्भाव धावुनि आतुरे ! १
- डुलती किती चवऱ्या वरी, की छत्रचामर ढालुनी-
या भूवरी, स्मरणें जुनीं पुजितात यांचीं अंतरें ? २
- केलें पदार्पण भूवरी या, बांधुनी घर सानुलें,
एकांत सेवुनि, ' शारदा ' नमिली तयें भावाक्षरें ! ३
- माळावरी या बैसुनी, जनयोग साधुनि चिंतनें,
केलें नवें हें नंदन, प्राणांतले शिंपुनी शरे ! ४
- माणूसकीचे दाखले फुलती इथे भूमीवरी,
म्हणुनीच कुरवाळीतसां की विज्ञाणांनी सत्वरें ? ५
- जळ या तपोभूमींतलें परि शोषुनी, संस्कारिलें-
मन, रंगभूमित रंगुनी निर्मी नवें जग तें खरें ! ६
- सरलें तुझें आयू तरी, कण सांडले रक्तांतले-
मार्तीत या; उठतील ते वर येउनी तेजागळे ! ७

१४ नोव्हेंबर १९५५

विश्रामबाग, सांगली

प्रतिभाशाली ! प्रतिभाशाली !

वाग्यज्ञीं तूं प्रतिभाशाली !

तव तेजाने मायभूमिच्या

सरस्वतीचीं विरुदें न्हालीं ! ॥ ध्रु० ॥

चहूकडे अंधार दाटला !

यज्ञाचा कणकणहि आटला !

विनाश राक्षसवृत्तित उठला !

ऋत्विज होउनि मंत्रप्रेरित

तव वाणी तों चमकत आली !

१

रसवाणीचे सडे शिंपुनी,

रंगवल्लिका शब्दीं काढुनि,

भावार्थांचें सुवर्ण भरुनी,

तुझ्या कृतीने विकृत वेदि ही

समिधा निर्मळ विशुद्ध ल्याली !

२

मुखरित होउनि ऋचा दुमदुमे,

दुःखाचा हविमंत्र घुमघुमे,

रसाळता तव त्यागांत रमे,

जणु सीता ही अग्नीमधुनी

शुद्ध म्हणूनी वरति निघाली !

३

सामगायनीं तूं उद्गाता;
नव्या युगांची तूं प्रेरकता;
रक्त तुझे करि यज्ञसांगता !
थेंबार्थेंबांतून फलश्रुति
मानवतेची जना मिळाली !

४

वाल्मीकिच की नव्या युगाचा,
अर्थ विवरिशीं कौंचवधाचा,
शोका स्वर ये श्लोकत्वाचा,
यज्ञांतुन तव नव रामायण
सेवुनि जनता चिरत धाली !

५

* * *

५ ऑगस्ट १९५६

फलटण

किती चतुर तुझी रे कला !

अंतरीं भाव मधुर उमलला !

॥ ध्रु० ॥

नाचल्या मृदुल अंगुली,

अप्सरा फुलीं वा जलीं,

स्पर्शीत स्वर, कोमला !

१

रुमझुमली स्वरमालिका,

ठुमकल्या जणूं बालिका,

‘गवळणि’चा स्वर फलकला !

२

संगमलीं युवतिस्मितें,

अन् मंजु मंजु रुंजितें,

झंकार गोड बहरला !

३

की स्पर्श कलांचे करीं—

नादावुन बसले तरी;

मग रसध्वनी उसळला !

४

रस, रूप, गंध मीनले,

शारदागुणीं रंगले,

गुंजारव उन्मेषला !

५

रक्तांत भाव गुंजले,

तव करांतुनी प्रकटले !

आलेख मुखीं उमटला !

६

शाश्वतावरी अंगुली-
तव थांबुनिया खेळली !
जीवनरस वोसंडला !

७

* * *

१२ ऑक्टोबर १९५६

फलटण

४६

२८. लोकशाही राणा !

छंद—अभंग

भाग्यलक्ष्मी आली घेऊनिया माळ,
झोपलेला वाळ पाहूनिया.
काय ती पुण्याई हिंदवी राज्याची,
येई वा कुळाची जागवाया ?
पुण्यश्रीने माळ घातलीसे गळां,
सोहळा आगळा गौरवाचा !
आणि संचारलें कांही नवें वारें,
प्रेरूनिया सारे भाव आले !
अखंड जनांच्या हृदयींची मूक-
चरणाशीं मूक तुझ्या आली !
घेऊनिया हातीं प्रेरक ती शक्ति,
तुशी लोकभक्ति उफाळली !

१

‘लोक माझा देव, लोक माझे मन,’
जनीं जनार्दन देखियेला.
ज्ञानरायें दिला समतासंदेश,
रक्ताचा आवेश उसळला !
‘सेवक मी लीन भवानीमातेचा,
आणि या जनांचा !’ बोलसीं तूं.
चंदनाचें तेल एका चरणाला
दुजा हा अग्रीला दिला तुवां;

जनकाची थोर कीर्ती मिळविली,
तपस्या साधिली सुखदुःखें.
शमवाया लोका, करावया भलें,
जीवन वेचलें भोगशून्य !

२

आणि आली आता भारताची माया,
तुज रिझवाया गौरवाने.
स्वातंत्र्याचे मंत्र घुमती हे भोती,
नवी आत्मज्योती पेटवूनी.
कुळीकुळीतल्या पुण्याईची रास-
जनतेची आस पुरवील.
खळाळून धारा मिजविती रानें,
तुझ्या करीं धानें पोसतील.
करूं हृदयाची तुझ्या आम्ही शेज,
भाग्यलक्ष्मी तेज वर्षो हेंच !

३

• * * *

८ फेब्रुवारी १९५७

फलटण

ये, ये, ये नव वर्षा !
भरती ये मम हर्षा ! ॥ ध्रु० ॥

येइ शक प्रथम दिवस,
स्वातंत्र्यांतिल लोभस;
गेलेले दिन न येति -
फिरुन कधी, ही खंती !
किमया परि हो न्यारी,
शक जुनाच ये दारी !
चैत्र आपुला महिना,
येइ नव्यानेच जुना;
घेउनि ये उत्कर्षा !

१

चालु युगा सारुनिया-
दूर, जुनी ये दुनिया !
शालिवाहना सुंदर-
ये नवीन हा अंकुर !
तरु जुनाच, नव कोयळ !
नव जळ, पूर्विल ओहळ !
डोंगर जरि हे जुनेच,
नव किरणीं शोभलेच !
पल्लवीत आदर्शा !

२

कंठ जुना, नव गाणें,
धातु जुनी, नव नाणें;
भूमि जुनी; पीक नवें;
मन जुनेच, तेज नवें;
मूठ जुनी, नव पातें,
कीर्त जुनी पालवेंते
शांति जुनी, नव भारत -
ताराया जगता रत -
चालवितो संघर्षा !

३

हिरमुसलें कां न्हावें ?
तेजाने नव न्हावें !
“ विश्वाला आर्य करूं - ”
आकांक्षा हीच धरूं;
घाया नव हीच आस;
चैत्र काय फुलविलास ?
येइ नवा मोहर हा,
थोर जुन्यांतील रहा !
नुरवाया अपकर्षा !

४

आजें जुनें होत नवें -
ये, जें सर्वास हवें;
टाकुनिया जीर्ण कांत,
उजळी ही दिव्य रात !

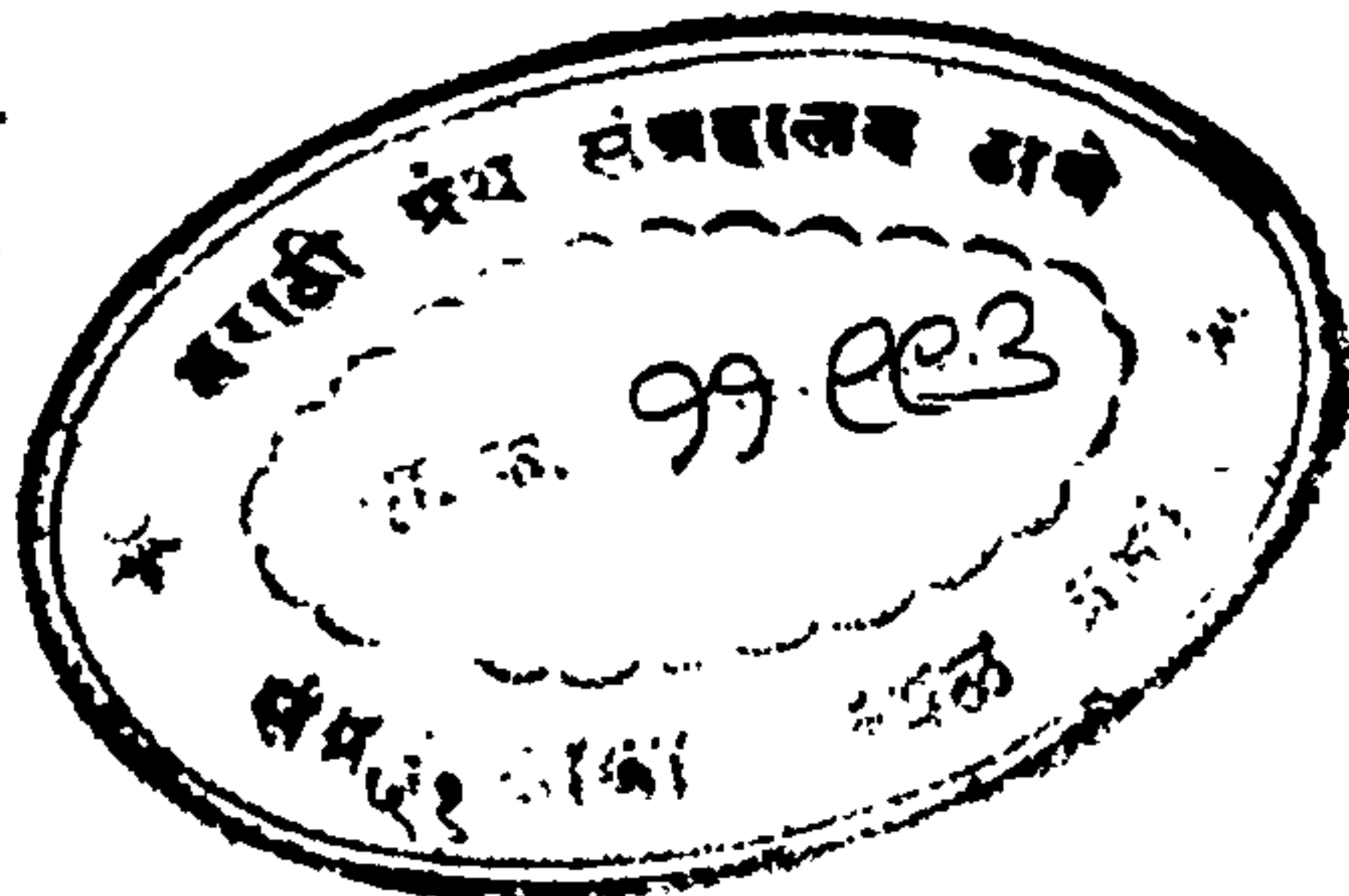
१०

ही किमया भव्य थोर,
चंद्राची नव्य कोर !
म्हणुन तुला हें वंदन !
म्हणुन तुझे अभिनंदन !
तूं वसंत, तूं वर्षा !

५

बराठी ग्रंथ संग्रहालय, ठाणे. स्वच्छ
क्रमांक... ७३८९६..... वि: ... का. ए. ६
क्रमांक ... १९४३..... बोर दि: ४-३-७९

१ चैत्र १८७९
२२ मार्च १९५७
फलटण



प्रीत तुझी नखरेल ग !

तव डोळ्यांच्या उघडझापिने

आंत कळी थरथरेल ग ! ॥ ध्रु० ॥

रुसवा येतां चोरुन बंधणें,

निघतां रागें मुरडुन वळणें;

अंतरांतला भाव रेशमी

त्यामधुनी अवतरेल ग !

१

तरंगुनी त्यावरती जाइल,

मन हें हृदिची कमळण पाहिल;

मरंदगोडीस्तव आसावुन

अंतरंगिं हें विरेल ग !

२

उडवी प्रीती नवे फवारे,

सुगंधांतुनी फिरतां वारें;

भावनिकेच्या फायावरलें

सुंदर लामे फुलेल ग !

३

तरल जिवाला असेच फिरवीं,

रोष मुलायम असेच मिरवीं,

भाव जिवांचे मृदु समरसुनी

कमळण त्यांतुनि फुलेल ग !

४

५ जून १९५७

* * *

फलटण

३१. भाऊविजेची भेट !

जाति—अनुष्टुभ

- तुझ्या स्नेहल भावाचे । साठले हृदयीं मणी,
गुंफुनी मालिका त्यांची । जपतों मी प्रतिक्षणीं ! १
- आनंद दिव्य माहेरीं । लाभे मायपित्यांसवें,
काळ तो स्मरतां, येती—। आर्त डोळ्यांस आसवें ! २
- सौभाग्य लाभलें, झालें—। स्वप्नवत् तेंहि जीवन !
कारुण्य वर्षलें घोर ! । स्मरता साश्रु लोचन ! ३
- अंधारीं किरणें तोंच । उजळे भाळ, अंतर !
उदार चरितांच्या हे । स्मृतीचे दिव्य पाझर ! ४
- कर्तव्यपालनीं थोर । आनंदाश्रू विभागतां,
उमळून झरे कांही । झुळझुळे जळ तें अता ! ५
- सेवाश्रू पोषिती बाग । समाधान भरे उरीं,
फुलोरलीं किती रोपें । सुखाचीं जवळीं, दुरी ! ६
- पिऊनी आग अश्रूंची । गारवा दिधला तुवां !
प्रफुल्लता तुझीं त्यांची ! सुखवी दिन हा नवा ! ७

* * *

११ नोव्हेंबर १९५७

फलटण

पुण्यशील ही जिवाजिवांची भावभेट जाहली,
वैखरी अमृताने नाहली ! ॥ ध्रु० ॥

●
पराक्रमाचें तेज संचरे खोऱ्याखोऱ्यांतुन !
दाटले भाव पहाडांतुन !
जिजाबाइची वाणी बोले पर्णापर्णामिधे,
कोयना, कृष्णा! प्रेरक वदे !
बोलकीं जाहलीं रानें - " स्वातंत्र्य ! " शब्द घुमवूनी !
नरवीर भरारति त्याने-वीरता फुलीं येऊनी !
थाप डफावर कडकडली तों ' भवानीहि ' पावली !
वैखरी अमृताने नाहली !

नवीन वारे, नवीन किरणें, नवजीवन पातळें !
गनीमी रण कांही रंगलें !
ब्रह्मतेज अन् क्षात्रतेज हीं एकजीव जाहलीं,
गर्जुनी थाळी वच घोषली !
निर्जीव वंशपेटारे-वंशास जागले थोर !
कोयना-जळाचें वारें रक्तांतुन उसळे घोर !
रायगडावर अभिषेकाची मंगलता वरसली !
वैखरी अमृताने नाहली !

स्वातंत्र्याच्या जरिपटक्याचा उंच ध्वज नाचला !
 रायगड उंच उंच वाढला !
 फडकत जवळी उभी राहिली पवित्र भगवी ध्वजा,
 सावरुनि शिवकुलवंशात्मजा !
 तों हसे खदखदा काळ-सावली कृष्ण फेकून !
 बेकीचें पिकवुनि भाग्य-काजळी मुखा फासून !
 कृष्णा-यमुना-मुळाजळांमधि खळखळ लव नादली !
 वैखरी अमृताने नाहली !

३

छत्रपतींच्या पराक्रमाचें तेज दिव्य लोपलें !
 सिंहही मेंढरेंच जाहले !
 लुप्त जाहली महोदधीची तेजस्वी गर्जना,
 हादरे धरणीचाही कणा !
 सूर्यास काळराहूने-ग्रासलें कृष्णपाशांनी !
 कोमेजुन लवल्या खाली-वृक्षलता दुरवस्थांनी !
 श्रृंखळांतुनी उपनिषदांची ऋचा घुमत राहिली !
 वैखरी अमृताने नाहली !

४

काळोखाची रात्र पसरली देशावर भारतीं;
 पेटली मधुन मधुन भूरती !
 दावि मृतांना तेज सरणिंचें चमक पूर्विची जरा,
 लागली लोपाया मग जरा,
 अवतरुन ' टिळक-गांधीजी '—चमकविती तेजें दिव्य !
 नसनसांत शिरलें पाणी-दावुनी छबी नव भव्य !

जवाहराची-‘ नव्या शिवाची ’-मूर्ति मंत्र बोलली !
वैखरी अमृताने नाहली !

५

जुन्या-नव्यांच्या पुण्याईची संचारुन चेतना,
मुक्तीची झाली नवगर्जना !
आणि गडावर शिवरायांची मूर्त उभी ठाकली !
नजर ती कृष्णेची फाकली !
फेकुनी दृष्टि भवताली-रंगली नजर तेजाने !
हिरवळलीं किल्ले-खोरीं-नवचैतन्ये हास्याने !
हवेंत परजुन खद्ग भवानी आज्ञा जणुं बोलली,
वैखरी अमृताने नाहली !

६

आणि घ्यावया दर्शन आले ‘ नवे शिवाजी ’ त्वरें,
मुक्तीचे सुपुत्र, वारस खरे !
शिणवुन चरणें, बघत सोहळा दिव्य पहाडांतला,
पाहिला सिंह डोंगरांतला !
पुण्याई रायगडाची-ये प्रतापगाडिं भेटाया !
‘ हिंदवी स्वराज्यची ’ ही - सफलता पुरी पाडाया !
युगायुगांची भेट ! - आसवें आनंदीं सांडलीं !
वैखरी अमृताने नाहली !

७

ऐटवाज ही कृष्णा घोडी, स्वार शिवाजी तसे,
दृष्टिने ‘ भवानि ’ परजीतसे !
लाख मावळे, लाख हिंदवी घुमविति खोरें जुनें,
हासती राजे ही प्रीतिने !

लागला मराठी बाणा-वोसंडुं फिरुं भवतालीं,
चैतन्ये नवरूपांनी - अंतरें भरुं मग आलीं !
नव अभिषेकासाठी स्वारी प्रतापगडिं पातली !
वैखरी अमृताने नाहली !

भेटीसाठी आतुर आले ' नवे शिवाजी ' गडी,
लेवुनी मराठफेटा गडी !
ज्योति अहिंसक हो खानाची ! शिरून रविच्या करीं-
तळपली वंदाया दों करीं !

घातली माळ राजांना - नव राजांनी निजहातीं !
घातली माळ कृष्णेला - थोपटून मंगल कांती !
वंदन करिती ' नव राजर्षी ' जोडुनिया अंजली !
वैखरी अमृताने नाहली !

भाग्य महाराष्ट्राचें मंगल भव्य म्हणुन सोहळा-
युगांचा गडागडां लाभला !
युगांतरांचे जुने नवे हे राजर्षी भेटले,
अश्रुचे पाणलोट लोटले !

गर्जल्या सलामी व्योर्भी - रंगीत अग्निबाणांनी !
आकाश फुले ! की केली - ही पुष्पवृष्टि देवांनी ?
नव्या युगाची मंत्रघोषणा प्रतिहृदयीं नादली !
वैखरी अमृताने नाहली !

१६ जानेवारी १९५८

फलटण

कुणि साधुवृत्तिने पाचारण मज केलें,
 हें बालपुजेस्तव होतें हृदय मुकेलें.
 मंदिरांत आलों होउनि हृदयीं आर्त,
 सोडून देउनी शब्दफुग्यांचा स्वार्थ.
 पातलों मंदिरीं भव्य नम्र भावाने,
 पूजेस्तव आलों परी रिक्त हस्ताने;
 पाहिल्या मनोहर या बालांच्या मूर्ती,
 पूजेस्तव उमळे हृदयामार्जीं स्फूर्ती.
 परि तीर्थ, फुलें वा चंदन, कुंकुम हातीं—
 कापूर, निरांजन, मंत्र न मज सांगार्ती !
 हीं पूजाद्रव्यें नसतां व्याकुळ होतों,
 अन् पूजेस्तव हा जीव आंतुनी तुटतो !

हें सुंदर मंदिर उभारिलें थोरांनी,
 भावना तयांची ध्येयें घुमतीं कानीं !
 लागती स्फुराया उचंबळूनी भाव,
 प्रेरिते आंतुनीं ज्ञानेशाची भाव;
 बसवून मंदिरीं काळकांबळीवाले,
 देशास्तव माझे शब्द पुजाया आले !
 चिमटींत उचलुनी या अंगणिचीं माती,
 लावितों कपाळा बुका समजुनी स्वांतीं.

अंजलीत धरुनी भाव, आसवें माझीं,
पूजितों तयांना ! सेवेने मी राजी !
हैं हृदय अर्पितों नैवेद्यास्तव त्यांना;
तेजेंच पुरविणें काम असें दीपांना !
कल्पितों बसूनी कल्पतरूच्या खाली,
की यांतुन कांही निपजे वैभवशाली !
संशोधक, नेते, महंत, राष्ट्रधुरीण,
नव भाग्यविधाते निघतां फिटते रीण;
ही थोरं फुलश्रुति पूजेंतून निघावी,
निष्काम होउनी स्वप्नें सगुण पहावीं !

२

ही एकच इच्छा ! पूजा ही त्यासाठी !
ही नैवेद्याची म्हणुनिच आटाआटी !

३

* * *

१८ ऑक्टोबर १९५८

फलटण

- आप्रेष्टांच्या प्रेरणेने,
 नंदादीप घडविला;
 सुखसंकटांनी त्याला,
 आत्मभाव जाणविला ! १
- स्नेह होऊनिया शुद्ध,
 आलीस तूं चाडयामधे;
 भिजवूनी वात देसीं,
 “ तेवा आता ” वाणी वदे. २
- ज्योत स्नेहाळ पेटली,
 आकारला सोनकळा,
 आसमंत खुल्लनिया,
 भाव भाव तेजाळला ! ३
- अंतर्बाह्य विश्व झालें,
 एक भाव, एक रूप !
 एकपणाचेंच आलें,
 जीवनास गोड रूप ! ४
- स्थाणूपण नंदादीपीं,
 स्नेहांतील जवळीक,
 वातज्योती—एकपण,
 मिळूनिया वाटे वीक ! ५

तरी, ' प्रकाशाची धणी ' ६
मानूनिया रत्नमणी,
भाऊबीजेच्या औक्षणीं—
घालितों गे ! ओवाळणी !

* * *

९ नोव्हेंबर १९५८
पुणे ४

३५. गुन्हेगार बालकें !

जाति - साकी

- कारुण्याचें जीवन यांच्या नयनांमार्जीं तरळें !
ओलावा दे धीर त्यांना आंतर, वेळोवेळे ! १
- पोटाशीं या लहानग्यांना धरुनी आपुलकीने,
घर निर्मावें यांच्या भवती वाटे जवळीकीने ! २
- कुणि सांगावें यांतुन जन्मा येइल भाग्यविधाता,
पाळायला आपण होतां त्यांच्या प्रेमळ माता ! ३
- ‘ स्वर्ग कुठे ? ’ जर म्हणुन विचारी कुणि त्या वातावरणीं,
आनंदाने सांगूं—‘ येथे, या बाळांच्या चरणीं ! ’ ४
- नरकामाजी पिचुन पचवितों परि नक्षत्रें वरलीं,
आणि बोलतो वरती आम्ही—‘ तेजें अमुचीं हरलीं ! ’ ५

१५ नोव्हेंबर १९५८

सातारा

आनंदाने करुं विज्ञाना ! तुझाच जयजयकार !
तुझीच सेवा अभ्युदयाचा घडवी साक्षात्कार ! ॥ ध्रु० ॥

ज्योतिर्मय हें नभ किति सुंदर !
अनंत गोलक फिरती गरगर !
तुझ्या कृपेने चंद्र फेकुनी करुं बघतो संचार ! १

सागरपोटीं रत्नें लपलीं !
विपुल संपदा तेथे अपुली !
जलचरापरी तिथे जावया तुझाच परि आधार ! २

भूमातेच्या अंतरांतले-
अजुन खजीने सर्व न दिसले !
मार्गदर्शना तूच अलौकिक अमुचा किमयागार ! ३

डोंगरराईतून विपुळलें,
अणुपरमाणुंत जीवन भरलें !
चैतन्ये तीं अम्हांस घाया एक तुझा अवतार ! ४

हृदयीं अमृत, वेद-संस्कृती;
अन् किमया तव मिळतां हातीं;
सिद्धहस्त निःश्रेयस मिळवुन करुंच जगदुद्धार ! ५

* * *

१५ डिसेंबर १९५८

फलटण

३७. सोनपाकळी !

छंद-अंगाई

(नवीन जन्मास आलेल्या बालिकेच्या नामकरणाच्या दिवशी)

सोनचाफ्याची का झोपली कळी ?

उमळूं घा आता सोनपाकळी !

गालींची भरूं घा सोनेरी खळी -

स्मिताने बाई ग, स्मिताने बाई !

१

अंगाई सोडून उघडा डोळे,

हलवून पाय, वाजवा वाळे,

अंतरीं उठवा गोड उमाळे -

हसून बाई ग, हसून बाई !

२

कमळण बघूं डोळ्यांमधली,

हसरी लकेर ओठांवरली,

गालांवर काय उषा फुलली -

झोपेत बाई ग, झोपेत बाई !

३

झाकल्या मुठींत गुपित काय ?

मिटला ओठांत साठली साय ?

साठवीली किंवा आईची माय -

पिऊन बाई ग, पिऊन बाई ?

४

नितळ नितळ कसं हें अंग !

आईचा घेतला काय हा रंग ?

शरदाचे काय त्यांत तरंग -

खेळती बाई ग, खेळती बाई !

५

उठा उठा आता सोडा अंगाई,
हळुवार हातीं हलवी आई !
नांव ठेवायाची झालीसे घाई -

सान्यांना बाई ग, सान्यांना बाई ! ६
आजी आल्या तुज ओवाळायला !
' गोविंद-गोपाळ ध्या ' करायला !
आजोबा कौतुके पहावयाला !
मंजरी बाई ग, मंजरी बाई ! ७

* * *

२ जानेवारी १९५९

सातारा

जाणार सोडुनी आज तुम्ही ना मजला !
 कंठांत दाटला मायेचाच उमाळा !
 सुखदुःखांचीं हीं टिपें उभीं डोळ्यांत !
 सुख वाटे मज मृदु हातीं कुरवळण्यांत !
 पाठीवर तुमच्या फिरवित असतां हात !
 किती तरंग मागिल, पुढिल मनीं येतात !
 संगोपुन ठेवी आजवरी जी माया,
 उमळून लाविते तीच मला बोलाया !

१

कधि अनिष्ट बाधा, दृष्ट न वा लागावी,
 देऊन बाळकडु, दृष्ट कधी काढावी !
 लागो न अहितकर वारा, पाउस, ऊन,
 राखिलें तुम्हांला निवाराच देऊन !
 सामर्थ्य आणि नित सकस तुम्हांला यावें,
 पाठविलें उघड्यावरी नियोजुन भावें !
 चोर्चीत घातला प्रेमें आणुनि चारा,
 कधि कुशीत दिधला मायेचाच उबारा !
 कधि छेडुन निर्मळ कठोरकटु वचनांनी—
 वाढवी तुम्हां, कधि कुरवाळुनि कुतुकांनी !
 कधि ओळख करुनी दिधली या सृष्टीची,
 कधि माणुसकीची कधि वा जनदृष्टीची !

आर्तता मनीं की निकोप व्हावीं बाळें,
प्रिय, संस्कृतिकर्तृत्वाने हीं लडिवाळें !
सोशिले किती त्यासाठी मी आघात !
हे दीप राखिले झाकुनिया पदरांत !

२

हीं तेजें आता अंगावर सरसरलीं;
ज्ञानानें तुमचीं हृदये निर्मळ भरलीं !
तुम्हे व्हावे कोणीं मोठे भाग्यविधाते,
घडविलें तुम्हांला म्हणुनी मी निजहातें !
वाढविते धरणी बीजें, देउन पाणी,
नव फुलाफळांचा बहर तयांना आणी !
पोटाग आंतली त्यापरि ही आईची—
वाढवी तुम्हांला ! किमया ही हृदयींची !
भरवितें आजला शेवटचे दो घास !
हे अश्रू पुरतिल जगावया दोघांस !

३

ध्रुव दावुन तरि हा तिलक लावितें भाळीं !
घालून करीं दहि, पंचारति ओवाळीं !

४

* * *

८ फेब्रुवारी १९५९

फालटण

३९. वृन्दावनांतील तुळस !

छंद—पादाकुलक

वृन्दावनांतील माझी
मंजण्यांनी बहरली

संसाराच्या मायेसाठी
अंतरांच्या स्फूर्तीसाठी
डोळ्यांचें निरांजन
इथे तेवत ठेविलें
रक्तांतून निथळलें
कल्पलता करी पूजा
विचारारती ओवाळी
वृन्दावनांतील माझी

रोप आणिलें दुरून
कण मिळे इवलसा
धरूनिया उराशीं हें
अंतरांचें खतपाणी
बांधीयलें घरदार
अंगणींच्या वृन्दावनीं
रोप तरारलें आता
वृन्दावनांतील माझी

होतें मन एकतान
तेज फाकतें अंतरां

नको तुळस दुखवूं !
नको फुलोरा घालवूं ! ॥ धृ० ॥

घर बांधिलें शेजारीं,
फुलविली ही मंजरी !
भावनेच्या वातीसवें,
देऊनिया स्नेहांसवें !
तिज घातलें मी पाणी,
मंत्र बोले अंतर्वाणी !
नको दीपिका मालवूं !
नको तुळस दुखवूं !

१

वास त्याला आळंदीचा,
इंद्रायणीच्या पाण्याचा !
नीट जपूनी आणिलें,
घालूनिया हें न्हाणीलें !
करावयास संसार,
परी जीवनाचें सार !
नको पाणी ग चुकवूं !
नको तुळस दुखवूं !

२

उदबत्तीच्या वासाने,
कापराच्या ग झोताने !

ओवियांच्या नैवेद्याने
तहानेलें अभंगांच्या
संसारीचें उणेंपुरें
इथे 'भुतें साम्या येतीं-
मंजरीचा हा प्रभाव,
वृंदावनांतील माझी

इथे अंतर्मन पोषे,
कणाकणासाठी शोषे !
इथे वितळतें धुकें,
सुख पराविया सुखें !'
नको फुंकरीं सुकवूं !
नको तुळस दुखवूं !

३

२३ जुलै १९५९
विश्रामबाग, सांगली

सहवास लाभला तुझा ! फुले चांदणें !
जीवनास भरती येई ! उचमळे आंतुनी जिणें ! ॥ धु० ॥

खडकाळ जीवनीं उन्हे वरुन तापलीं,
संसारत्वाप सहतांना तनुमनें किती रापलीं !
चाललीं तपस्या अशी !
उत्फुल्ल तुझा परि शशी !
उजळलीं अंतरें, आंत खुले हासणें ! .

जीवनास भरती० १

करपलीं जिवाचीं फुलें बहर येउनी;
काळीज कळंजुन गेलें, कोवळे कळे कोमुनी !
परि तुवां स्मितें फुलविलीं !
माधुरी भवति वर्षली !

दर्शनीं तुझ्या, तीं पिउन फुलोरतिं तृणें !

जीवनास भरती० २

कडकडली बिजली घोर ' कल्पतरु ' वरी !
वैराण जळाल्या रानीं तव ओलावा सावरी !

जागली तुझी संस्कृती—

त्यागास्तव हसरी किती !

हृदयिची प्रतिष्ठा घोर पडुं न दे उणें !

जीवनास भरती० ३

घरवात करुन तेजाळ किरण ओतिले;
मृदुभावगर्भ शब्दांनी परिवार तुवां जिंकिले !
तूं शब्दशुचि प्रेमळा;
संयमींहि फुलला गळा !
रंगलीं तुझ्या गाण्यांत फुलून अंगणें !
जीवनास भरती० ४

उन्मेष दाटुनी भाव हृदीं नाचले,
तूं कौतुकुनी नेत्रांचें नीरांजन ओवाळिलें !
आरती मूक ऐकुनी,
जातात वृत्ति बहरुनी !
कौतुकें तुझीं होतात जिवा कोंदणें !
जीवनास भरती० ५

तूं अमृतदेवता ! तुझें अमृत शिंपणें !
घर शांतरसाने सारें शृंगारुन हो देखणें !
ज्ञानदेवि की अवतरे ?
जिववाया कण कण फिरे ?
सायुज्य लाभलें तुझ्या प्रीतिच्या गुणें !
जीवनास भरती० ६

* * *

३० जुलै १९५९
विश्रामबाग, सांगली

४१. धन्य देवि तूं !

जाति-सूर्यकांत

धन्य देवि तूं किमया केलिस, सेवाव्रतमंगले !
अंबलोद्वारीं निर्मळ जीवन किती तुझे रंगलें ! ॥ ध्रु० ॥

परित्यक्त या आल्या भगिनी गाळित कुणि आंसवें,
अज्ञानी कुणि, कुणि पिचलेल्या, दलित कुणी त्यांसवें !
उल्का मानुन देवाघरच्या तयांस संगोपिलें !

धन्य देवि तूं० १

उधळुन गेल्या संसारांना रूप दिलें गोजिरें,
सुकलेल्या या उद्यानास्तव उमलति जीवनझरे !
फुलल्या बागा कितीक सदनीं, फुलेल सौगंधलें !

धन्य देवि तूं० २

अमृत लाभलें घरींच तुजला द्रष्ट्यां वाणींतुन,
पाणपोइ तूं करिसिं तियेची, देशांतुन फिरवुन,
वठलेलीं हीं रसाळ झालीं फुलोरुनी जंगलें !

धन्य देवि तूं० ३

ज्योत लाविली सदनीं त्याची प्रभा किती फाकली !
स्नेहवात देऊन, तियेला अनुगांनी राखिली—
स्त्रीत्वाच्या तेजाचीं वलयें ! तम सारें भंगलें !

धन्य देवि तूं ४

१ न्यायमूर्ति रानडे यांच्या

दिसातिल आता नव्या अहिल्या द्रौपदि मंडोदरी-
सीता, तारा ! पूजिल त्यांना भारत निजमंदिरीं !
कर्तृत्वाचे भविष्य तव हें दारीं ओठंगलें !

धन्य देवि तूं०

५

* * *

२९ जुलै १९५९
विश्रामबाग, सांगली

४२. संपत् शुक्रवार

छंद-पादाकुलक

आला संपत् शुक्रवार !
अन् संसारीं आपापुल्या
जवळी हीं नातवंडे
अंजारून गोंजारून
तीन शुक्रवार गेले
ओवाळून छत्रड्यांना

आज संपत् शुक्रवार !
स्मरणाने कंठ दाटे !
पुरणाचे दिवे पांच
हिन्यासम नातवंडा
परी शमली न भूक
चार दिशांना अक्षता

ओवाळितां हवेमधे
अश्रु सांडले पदरीं !
पुटपुटे माय ओठीं
लेणें घातलें तें गळां

दूर दूर गेलीं बाळें !
मन त्यांचें दंग झालें !
वेड्या मायेने ठेविलीं,
ऊब स्पर्शाने सेविली !
श्रावणाचे सुने सुने !
सांतवी, जें मनीं उणें ! १

पोटापाठी बाळें गेलीं !
नेत्रें तुडुंब भरलीं !
पंचारतींत घातले,
भारावून ओवाळिलें !
डोळे पुन्हा पाणावले !
फेकूनिया ओवाळिलें ! २

रित्या शुभ दिशा चार,
हुंदका हो अनावर !
आशीर्वाद कंपनाने
भिजलेल्या श्रावणाने ! ३

२८ ऑगस्ट १९५९

विश्रामबाग, सांगली

४३. वासंतिक किमया !

जाति-

[' अतिपिनद्धास्मि वल्कलेन ' या शाकुंतलांतील कालिदासोक्तीच्या आधारे]

शकुंतला :- “ साखि ! सैल करी आवळली काचोळी !
तटतटली किति ही मेली !

किति वार सांगुं मी तुजला ?

ही पुरे करी तव लीला !

थडेचा खेळ ग कसला !

तुंज काय कळे, उरांतुनी कळ आली !

वल्कलें घडू बघ, रुतलीं ! ” १

प्रियंवदा :- “ मज कळतें ग, कळतें सारें बाई !

अपराध न माझा कांही !

कां बोलसि सोडुन तोल ?

मुसमुसली तनु अनमोल !

यौवनास लावी बोल !

हीं कलिकांचीं फुलें अंगभर फुललीं !

वासंतिक किमया सलली ! २

* * *

११ सप्टेंबर १९५९

विश्रामबाग, सांगली

ही न्यहार दिसते उतरण पाठीकडली,
किति वृक्षलतांनी पुष्पकळ्यांनी भरली !
संकटें नि खाचा, धोंडे झालीं पुष्पें !
ही विविधरूपिणी सृष्टी रंगुन फुलली !

१

त्यावरिल मुलायम वेचुन रंग, सुगंध,
पाकळी-परागांतिल मृदुतेचे कंद,
रविचंद्रतारका यांनी दिघलीं तेजें,
चल सेवूं आपण सारे गोड मरंद !

२

* * *

१ नोव्हेंबर १९५९
विश्रामबाग, सांगली

हा आला मंगल कलश महाराष्ट्राचा !
 हा अमृतरसाचा, ऊर्जस्वल तेजाचा !
 हा वसिष्ठ-गुरुचा रामरसाचा पेला,
 श्रीकृष्णबलाने चिरंत हा भरलेला !
 रसरसे अंतरीं वारकन्यांची वाणी,
 शिवसहाद्रीच्या धारकन्यांचे पाणी !
 हौतात्म्य बोलते प्रेरक यांतुन मंत्र,
 द्रष्ट्याचे बघते यांतुन लोचनयंत्र !
 कर्मयोग खेले महात्मतेच्या संगे,
 मानव्यासाठी भाव यांतला रंगे !

१

हा भारतमुकुटांतील कोहिनुर थोर,
 विलसे ही भारतचंद्राची नव कोर !
 हा राष्ट्रपुरुषशौर्याचा उजवा बाहू
 जिंकाया येई कष्मल, केतू-राहू !
 संगीत यांतुनी मायभूमिचे येई,
 दे नवी प्रेरणा स्वरभावाची सनई !
 जे ज्ञानतपस्येमाजी संतत रमले,
 ऋषिवर्यांचे त्या सुगंध यामधि भरले !
 नव वेदऋचांचे सूर यांतुनी घुमती,
 ये समृद्धीची, पूर्णत्वाची भरती !

२

ये मंगल कलशा ! नम्र तुजपुढे माथा !
 नव पराक्रमांनी घडवूं भारतगाथा !
 ये प्रेरक मंत्रोदका ! तुझ्यांतिल पाणी -
 एकीस्तव आम्हां मायभक्तिने न्हाणी !
 हिंदवी स्वराज्यासाठी चिर जगणारे,
 गरिबांच्यासाठी होऊं चिरं झिजणारे !
 मानव्यासाठी झुंझ देउनी घोर,
 करुं तीर्थसेवनें भारत अमुचा थोर !
 तुजमधे मिळालें नद्यानद्यांचें पाणी,
 तुजमधे गर्जतो सागर अपुली वाणी !

३

हे झरे मिळाले विविध डोंगरी सारे -
 तुजमधे, चमकती विविध नभांतिल तारे !
 सहकारतरुंचीं पानें खोवून वरती,
 हें श्रीफल विलसे, मंगल कुंकुमकांती !
 ये नव्या जीवना ! नव्या आस्मिते दिव्य !
 ये घडवायाला भाग्य जगाचें भव्य !

४

'यशवन्त' जाहला वैनतेय कलशाचा !
 झुंझार फेडि हा पांग मायभूमीचा !

५

११ सप्टेंबर १९५९
 विश्रामबाग, सांगली

करुनि तपस्या कर्तृत्वे अन् प्रेमाने जिंकिलें,
 पंचमहाभूतांस तुम्हीं निज सेवेला आणिलें !
 मनुष्य व्हावा उंच वैभवीं समृद्धीच्या घरीं,
 आणुनि दिधला किमयाकांदिल म्हणून काय हा करीं ?
 किमया केली तुम्हीं अलौकिक शिकवुनि कांही नवें,
 चैतन्यांतिल तेज आपुलें किति आम्हां मानवे ! १

किति वळविलें पृथ्विस आपण रूपें नव देउनी;
 अंगांगांना किति घेइ ती आज्ञेने वळवुनी !
 जाळुन घेउन, रसरूपाने पाटांतुन ओघळे,
 ठिणग्या फुलवित असंख्य, तेजोलोह किति झळझळे !
 साव्यांतिल ठोकळा सोशितो प्रचंड यांत्रिक घण;
 रूपें घेई अनेकपरिचीं हीं मनुजाकारण ! २

जळ आणिक हा वायु होउनी एक, फवारे किति—
 गती घेउनी जवळदूरची, सामर्थ्ये फेकिते !
 तेज बिजलिचें चिन्मय म्हणजे चिरप्राण आंतला !
 स्पर्शाने प्रतिवस्तुंत वाटे आज तिने घातला !
 आणि थोरवी आकाशाची अनंत ही केवढी !
 सामावुन तें घेई सारीं पोकळींत या खडीं ! ३

एकवट्टनी सामर्थ्ये हीं केलीं येथें उर्भी;
 मानवहस्तस्पर्श करिते चमत्कार हीं नर्भी !

सुखवायाला गरिबाला अन् उंचविण्याला तया-
शक्ति पातली नवी ईश्वरी भारत उजळावया !
हाच नवा अवतार वाटतो, युगांत या संभवीं,
आवाजांतुन 'गीता' अपुली घोषितसे तो नवी !

४

गीतेतुन या जागृत होइल प्रेम अंतरांतले !
शांती होइल विश्वाची ती ! मंगल तें आपुलें !

* * *

२ जानेवारी १९६०
भिलई, मध्यप्रदेश

४७. श्रीरामकृष्णाश्रमाकडे जातांना !

छंद—अभंग

- तुम्ही सद्गुरु सद्गुरु !
पायवणी भावें वरूं,
संसाराच्या सिद्धीतून
आलों शांतवाया मन ! १
- येथे अमृताची वाणी
धुमताहे या निर्वाणी !
शिष्यवृंद गंगातटीं
प्रीत शोभविती मठीं ! २
- थेव त्यांतलाच द्यावा
शांतीचाच तो विसावा.
उत्कटून भक्तिभाव
आलों पायीं, द्यावी मात्र ! ३
- गुरुदेवा, दर्शनाने
आनंदलीं तनमनें !
सुख झालें ! सुख झालें !
अंतःप्राण हे निवले ! ४

* * *

१३ जानेवारी १९६०
कलकत्ता स्टेशन, पडशाळा

सो. चां....६

४८. श्रीरामकृष्णमंदिरांत !

छंद—अभंग

- पुण्यगाठीं कांही म्हणूनिया आलों,
अंतरांत धालों दर्शनाने ! १
- अश्रू शिरपती आनंदोत्कर्षाने,
उत्कट भावाने मिजविलें ! २
- किती दिस लागे भेटीची ही आस,
आज माझी प्यास पुरविली ! ३
- आनंदसोहळा अपूर्व ! अपूर्व !
आलें वाटे पर्व नवें मनीं ! ४
- मधुरा ही भक्ति देई पायवणी,
सेवितों चरणीं दिव्यवाणी ! ५
- गुरुदेवा, हाच देऊन ओलावा,
असा बोलवावा भाव माझा ! ६

* * *

१३ जानेवारी १९६०

बैलूर मठ, कलकत्ता

४९. श्रीविवेकानंदमंदिरांत !

छंद-अभंग

| | |
|--|---|
| मनोमन देई प्रेरणा ही वाणी, बालपणांतूनी चैतन्याची ! | १ |
| उजाळिलें माझे तेजाने जावन, भारी अंतर्मन तेजोरूपें ! | २ |
| विजेपरी वाटे वाणीची लहरी, अंतरास करी प्रकाशित ! | ३ |
| गुरुदेव देती प्रेरणा ज्या मनीं, जर्गी प्रतीकर्णीं खेळविल्या ! | ४ |
| धर्मपताका जी उच्च फडकली, तिची धडकली लाट सर्वां ! | ५ |
| आज ' उँकारांत ' तेज तें पहातों अंतर्मनीं होतों तृप्त भावें ! | ६ |

* * *

१३ जानेवारी १९६०

बैलूर मठ, कलकत्ता

| | |
|---|---|
| डोळाभर पाहे फेटा हा काषाय, भारावून जाय स्मृति, मन ! | १ |
| पारणें फेडितों पाहूनी हा दंड, प्रतीक उदंड सामर्थ्याचें ! | २ |
| इथून पावले फिरलीं आपुलीं, भूमी मंतरली पदन्यासें ! | ३ |
| इथेच उदेले अमृताचे पेले, पितांना निवले अंतरंग ! | ४ |
| इथे शेजेवरी ध्यानांत रमले— मन हो आपुले, शोपतांना ! | ५ |
| सर्वेद्रिये पितीं तोच एक रस, होतां समस्त कणांशीं या ! | ६ |

* * *

१७ जानेवारी १९६०
नाशिक

आधिराज आपण शोभलां नववैभवं कनकासर्नी !
 अभिमान, गौरव दाटुनो फुललीं किती हृदये मनीं !
 मणिकांचनापरि योग हा, सुमसौरभासम ही कुणा,
 कुलतेज पाहुनि वाटला; गुणदीप्तिने गमला दुणा ! १

कुलसंस्कृती शिकवी—‘ प्रजाहित हीच एक उपासना !’
 मन भोगशून्य करूनिया, रचिली तुम्ही नव साधना !
 म्हणुनी फुलारिच होउनी, जन पाळिले जननीपरी;
 दिघले फुलेल फुलासवें, जल शिंपुनी लतिकांवरी ! २

नव संस्कृती, नव वैभवं, रचना नवी, नवजीवनें,
 कृतिनी उभारुन रंगलां, नृपदंपती परचितने !
 जळ वाहतें सरितेमधे जवळी, नवें जळ आणुनी,
 प्रतिमा तिची अनुकारिली नगरीं, नवेपण बाणुनी ! ३

जवळीक कोमल दाटली हृदयीं अथांग नदासम,
 मृदु जाहला रसनंतला प्रतिशब्द तो अमृतोपम !
 तव कर्ण ऐकुनिया पिती वचनें जुनीं, नव साधुर्चीं,
 धमन्यांतुनी रस वाहुनी, जनतेस देति सुधा वचीं ! ४

रविच्या करांतिल सोशिली प्रखरैकता नित तापली,
 परि शीत भावरसायनें मृदु चंद्रिकेपरि ओपली !
 प्रतिवस्तुला उजळूनिया, फुलवी किती तव चांदणे !
 तव संनिधीं वसतां, नृपा ! भिजतां करीं, फुलतें त्रिषे ! ५

रस अंतरीं मिळवून, ते रसनैतुनी नित वर्षलें !

‘ गुरु आपुला सहकार ! ’—हे फळ चाखतां मनिं बिंबलें !

किरणें तुम्हांतिल टाकित्ती उजळूनिया नगरें, पुरें;

तव कीर्तिचीं दिसतीं नभीं कित्ती उंच मंदिरगोपुरें !

६

तव चेतना जिववी कुणा ! तव भावना सुखवी कुणा !

तव संयमीं हृदयांतल्या परमार्थिच्या पटल्या खुणा !

व्यवहार हे परमार्थिले प्रति पावलीं मनिं घोळुनी;

पुढली गती दिधली जना, सुविचाररक्षक होउनी !

७

अधिराज्य सोडुनिया तुम्ही, ‘ वनवास ’ कष्टद सेविलां;

तव पादुका भरतापरी जनभाव सेवुनि राहिला !

नृपती नसूनहि, चालतें तव राज्य या जनतेवरी !

‘ स्वयमेव हीच मृगेंद्रता ! ’ मिळवी जर्गी कृतिवैखरी ?

८

अनुशासनीं ‘ रघुराज ’ आपण वैभवांत न गुंतलां !

ऋषिवैभवे ऋषिकालचीं कित्ती दाविलीं नव भूतला !

‘ अधिराज्य जें जनताहदीं, रघुराज्य तें ! ’—मज दाविलें,

म्हणुनी तुम्हांवर नम्र हे नव चारु चामर ढाळिले !

९

* * *

३ फेब्रुवारी १९६०

विश्रामबाग, सांगली

(श्रीमत् रामकृष्णपरमहंस यांच्या जयंतीस सुचलेले कांही भाव)

तुम्ही थोर अवतारी
सचेतन-अचेतन
व्यापकाच्या पलीकडे
अनुभूति पचवुनी
विश्वनिर्मित्याची शक्ती
आणि शून्यांत विलीन

वाणी अमृताची तारी;
तुम्ही अनुभविलें मन !
धर्मीं धर्मीं धाव चढे !
झाला अमृताचे धनी !
देई तुम्हां आर्त भक्ति !
व्हाया, झालां तुम्ही लीन !

१

लीनतेत कण दिले
रोपें नवीं अंकुरतीं
उजळाय़ा शुद्ध बीज
कणाकणांतील सारा
रसांतील तेजस्विता
थोरवी मी किती मानूं

फेकूनिया भोवताले !
अजूनही तेजें किती !
आली समतेची वीज !
तुम्हीं घेतलां उबार !
रमे रसना सेवितां !
तुम्ही अमुचे धर्मभानू !

२

दिला ' विवेक ' हा हिरा !
फडकवी धर्मध्वजा
रक्तकणांतून आले
जडवादी झळंबली—
हिरोशिमा जाहलेली
अंकुरांनी दिला हात,

भारताचा तो मोहरा !
जिववून रजां रजां !
अमृतौघ ओहळले !
सृष्टी ! बुद्धि व्याकुळली !
बधूं लागे माया ओली !
तेच आता मायतात !

३

करणीच थोर ऐशी
होमीं सदाचा पेटला
कुराणांनी, बायबलांनी
शैव, वैष्णव हे झाले
एक तत्त्व, एक भाव
ऐशीं नवलें वर्तलीं !

रोमरोमांतून आले
शहारले आनंदाने
पुलकित मन, काया
बोले तीच बाह्यांतरीं
उपनिषदांची वाणी
गुरुदेवा, आळवीले-

संगोपितां भुकेल्यार्शीं;
अग्नी चेतवाया भूला !
यावें जैन वा बुद्धांनी,
एकरूपरस न्हाले !
समरसे दिव्य भाव !
जगा दर्शनें दाविर्लीं ! ४

रक्तभाव व्याकुळले !
तेच संगीतधुंदीने;
भावसमाधि किमया !
स्वरीं घुमत वैखरी !
आली माया पुन्हा गाणीं !
राग !! रसीं धन्य केले ! ५

* * *

१७ फेब्रुवारी १९६०
श्रीरामकृष्णजयंति
विश्रामबाग, सांगली

५३. जय महाराष्ट्र !

जाति : सूर्यकांत

जय जय जय हे महाराष्ट्र ! तूं भारतमुकुटीं हिरा !

मंगल, कणखर, ऊर्जस्वल, तूं मराठमोळा खरा ! ॥ धु० ॥

परंपरा तव थोर पौरुषी गुणशौर्ये निर्मिली !

माय भवानी, माय मराठी सामर्थ्ये पूजिली !

पिढ्यापिढ्यांतुन एक मराठी वळण दिलें अंतरा ! १

जय जय जय०

पारतंत्र्य तुज कधी न रुचलें ! बंडखोर तूं मनीं !

झुगारिल्या तूं रूढी, अपुल्या परंपरा राखुनी !

शिपाइबाणा सत्यशोधनीं विलगे तुझिया स्वरा ! २

जय जय जय०

शककर्ते कुणि उदार यादव देवगिरी उभविती;

छत्रपतींचें ' गौरीशंकर शिखर ' शोभतें किती !

बांजी-माधव तेजें उसळे सह्याद्रीचा दरा ! ३

जय जय जय०

महानुभावी ज्ञानेशाची रसवंती अमृता -

जिंकुन, निर्मी नामा, एका, कैवल्याची कथा !

समर्थ-तुक्या-शाहीरांनीं जिवंत केला चिरा ! ४

जय जय जय०

दमयंती-रुक्मिणी चमकल्या थोर तुझ्या कन्यका !

जिजा, अहल्या, उमा न करिती जन्म तुझा धन्य का ?

ज्ञांशीवाली लक्ष्मी पिउनी आग भूषवी धरा ! ५

जय जय जय०

अवदर्शेतही रंगो बापू, प्रताप, नानासर्वे, -

ज्वलंत फडके, वीर विनायक चेतविती आसर्वे !

फुले, रानडे, टिळक, गोखले, भीम, सुधारकगिरा ! ६

जय जय जय०

कलाकुसर तव पहाडांतुनी राउळांत पसरली,

कैलासाचे अनुपम लेणे साक्ष देइ भूतलीं !

गाननर्तनीं, चित्रकरांनी सजवियले मंदिरा ! ७

जय जय जय०

वाग्वीरांनी आज ' तुतारी ' प्राणस्वर फुंकिली,

डफ-वीणेवर ज्वलत् अस्मिता-गीते तव गुंफिलीं !

अमोल उमळे स्वप्नाळूंच्या नववाणीचा झरा ! ८

जय जय जय०

मांगल्याची खाण शोधिली भावभक्तिने तुवां,

वारकऱ्यांचा धारकऱ्यांशीं तूंच जोडिला दुवा !

प्रेरक होती शालु, कपाशी, भात, गहू, हरभरा ! ९

जय जय जय०

श्रमगंगा ही शेतकऱ्यांची वाहे काळींतुनी,

माय विनोबा डोळाभर ती बघती आनंदुनी !

महात्मतेच्या शिवशक्तीचा गुरु तूं, अन्. मोहरा ! १०

जय जय जय०

* * *

२५ फेब्रुवारी १९६०

विश्रामबाग, सांगली

अंगाचे तुकडे जळून रविच्या ज्वाळा उफाळूनिया —
जाती दूर अनंत कोस गगनीं, विश्वास शोधावया;
अंगाभोवति अग्नि हा धडधडे, पेटूनिया सर्वदा,
तेजाने परि होतसे चमकुनी चैतन्यता शर्मदा !

१

गेले जे तुकडे उडून कण वा सर्वांगभट्टीतले,
झाले तारक ते सुरम्य गगनीं ! तेजाळुनी राहिले !
त्यामाजीं कविचीं मनें विरमलीं, सृष्टी नवी निर्मुनी !
विज्ञानी नववेध घेत रतले अज्ञातसंशोधनीं !

२

हीं शेतें, सरिता नि डोंगरदऱ्या, आकाश, कादंबिनी,
अब्धी, इंद्रधनु, समीर, ऋतु हे घेती जिणें त्यांतुनी !
प्रत्यंगांत तदीय तेज विलसे, रंगे जिणें मानवी !
सौंदर्यें फुलतीं नवीं प्रतिकर्णी ! विश्वांत गाती कवी !

३

मित्रा ! हे उडती स्फुलिंग तुझिया रक्तांतुनी त्यापरी,—
होती दीपक ते तमोमय पथीं, अनू गंध मार्गावरी !

४

७ मार्च १९६०

विश्रामबाग, सांगली

जयजयकार तुझा नित गाऊं महाराष्ट्रभूमि !
संस्कृति अमुची तूंच, अस्मिता, ज्वलंत तूं ऊर्मी ! ॥ ध्रु० ॥

वारा फुलवी टपोरा दाणा,
आणि अंगिंचा कणखर बाणा,
खपून काळीमधे मानितों सार्थक तें धामी ! १

वारकऱ्यांची अभंग-वाणी,
रसाळ जात्यावरलीं गाणीं,
ढफावरी कडकडे लावणी घाटदार नामी ! २

उदात्त, सुंदर, सत्य अंतरीं,
ध्येय हिंदवी वदे वैखरी,
माय भवानी, माय मराठी पूजितसूं आम्हीं ! ३

माणुसकीस्तव खड्ग नि वाणी,
झुंझे सहाद्रीचें पाणी !
शिवशक्तीने सेवूं भारत, पूजुन तुज धामी ! ४

* * *

९ एप्रिल १९६०

हं. प्रा. ठा. कॉलेज नाशिक

५६. ये मंगल महाराष्ट्रा !

छंद—दासी

किरण नवे झळझळले !
रंग नवे आकाशीं
पुसट तारका नि चंद्र
वैभव हें बघण्याला
रातराणि ही अजुनी
आम्रांतुन नव तोरण
निर्झरांत झुळझुळते
कृष्णा-गोदादि जळें
सह्याद्री कां खुल्ला
गड सारे अन् कोकिळ

येइ महाराष्ट्रा, तूं
कणकण नव चैतन्यें
गतजन्मीं त्यागाचें
भालाइत मावळांत,
खेड्यांतिल या गडणी
घेउनि सौभाग्यकरीं
ही प्रतापगडिंच्या ये
रायगडाहून जिजा-
अन् कृष्णाघोडीवर
गुरु-झेंड्यांसह येती

गंध नवे दरवळले !
बहरुनिया चमचमले !
अजुन कसे रेंगळती ?
होतीं कीं मंदगती ?
फुलुन कशी मृदु डुळते ?
फांदीवर लवथवतें !
फेसांची पुष्परास !
उधळतात का सुवास ?
करुन उंच ताठ मान,
रविकिरणीं भरिति तान ? १

तुजसाठी हे फुलले !
विश्व जुनें रसरसलें !
गीत गात जो रमला —
स्वर दरींत, तो घुमला !
सिंहगडाहून येती,
किरणांची पंचारति !
मंदिरिंची दीपकळी,
माता ही ओवाळी !
जरिपटका फडकावित,
छत्रपती स्वागतार्थ ! २

आणि हात पालवीत
 येती तरु-पर्णांतुनि
 वारकरी ये दिंडी,
 ये ' अमात्यराजनीति '
 ' राज्य व्यवहारकोश '
 बखरींतिल आर्तभाव
 आणि नद्यांतील जळें
 अभिषेकीं गळलेलीं
 घोष मधुर सनयांचे,
 होउनी उवलंत पुन्हा

राज्यनीतिमधिल ' चुका '
 ' काधि न करूं अपशकून !
 आणि ' शत्रु ' परिवर्तुन
 नव महंत वदती की
 म्यानांतिल तलवारी
 ' गंजुं न ! परि-' वदती की,
 उद्योगीं रमलेलीं
 ' मित्र म्हणा आम्हांला ! '
 आलीं श्रमसौंदर्यें
 समृद्धी ये टाकित

आणि ' भवानी आई '
 स्नेहदीप किरणांनी

उज्ज्वल दिव्येतिहास,
 मंगल फुलवीत हास !
 ' दासबोध ' कुबडीसह;
 गौप्य कथित अंतर्वह !
 ओतुनिया रत्नमणी,
 सामोरा येइ शर्णी !
 भारतीय, रायगडीं-
 ताजिम घायास खडी !
 डफ-त्रीणांचे दडले,
 स्वागतार्थ हे उठले !

३

लज्जित होउनि येती,
 सत्य तेंच करूं ! ' वदती !
 आर्त भाव सांगतात,
 तरुणांना करूं महंत !
 बोलतात भाव नवे-
 ' शांतीचें राज्य हवें ! '
 देशदेशिचीं यंत्रें-
 प्रेरिति या नव मंत्रें !
 आलिंगन तुज घाया !
 पाउल, तुज सुखवाया !

४

औक्षणार्थ ही आली,
 ओवाळुन पुटपुटली,-

‘ सहा—सम हो कणखर
हिंदवी स्वराज्य करीं
माय मराठी मग ये
झेंडयावर नाचवीत ।
होउनिया रुद्धकंठ
आशीर्वच मूक वदे
नांव ‘ महाराष्ट्र ’ करीं
‘ माणुसकी धर्म नवा !

ठेवुन हृदयीं पाझर !
हें उदंड सुख निर्भर ! ’
हासत निजगडणिंसेवे,
अमृताचे बोल नवे !
गहिवरली तुज पाहून !
गळणाऱ्या अश्रूंतुन,—
सार्थ, नवे युग पचवुन !
हेंच तुझे संजीवन ! ’ ५

१३ एप्रिल १९६०

हं. प्रा. ठा. कॉलेज, नाशिक

आज तुझ्या अंगगांत चांफा फुलला !

रातराणीचा या गंध दरवळला ! ॥ ४० ॥

संसाराची बाग तुवां लाविली छान !

जपणूक केली तिची ठेवाया शान !

जीवेंभावे खपूनी तूं घाम शिंपिला ! १

उध्वस्तलीं रोपें, त्यांस करूनी आळीं,

भिजविलें आर्ततेने डोळ्यांच्या जळीं !

निगराणी लाभतांच मुगारा आला ! २

मशागत करी तुझी कलेची दृष्टी,

भावकिरणांची होई सोनेरी वृष्टी !

अंतरींच्या ओलाव्याचा वर्षा लाभला ! ३

श्रमलीस फार बाई ! थकलीस तूं ;

सहकारी जोडीदार लाभे परंतु !

उभयांच्या श्रमत्यागीं जीवनकला ! ४

हातवटी थोर तुझी, जादू भरली !

गोंजारितां रोपें किती तरतरलीं !

गुलाब नि पारिजात, चांफा खुलला ! ५

भावकला हृदयांत एकवटली !
जीवनाचीं मूल्ये थोर नीट रोखिलीं !
तेजोगर्भ स्वर्ग तुम्हीं खाली आणिला ! ६

उभे राहूं इथे भावकारंजापारीं,
दरवळ सेवूं येतां वाऱ्यासरशी !
सुखी तुमच्या या धुंद जीव रंगला ! ७

* * *

४ मे १९६०
विश्रामबाग, सांगली

सो. चां....७

९७

हिंदोळा हालवूं । आकाशीं झुलवूं !
तरंगूनी वर वर वाई,
मनाला फुलवूं ! ॥ ध्रु० ॥

वारा हा हालतो, । लिंबाहि डोलतो,
झोबूनिया पदराला वाई,
अंतर खोलतो ! १

श्रावण सरसरे । हिरवळ फुरफुरे,
झेन्नानिया मोती ते वाई,
नदी ही विहरे ! २

चढवा ग झोला । सांभाळा पणू तोला,
लकेरीनं ' गवळण ' गा वाई,
गळा जरा ग खोला ! ३

' झुणझुण पाखरा, । जा माझ्या माहेरा, '
आवडीचं गाणं हें वाई,
गाया सूर हा धरा ! ४

बैटक मारूनी, । दोरांस धरूनी,
हवेवर पोहूनी वाई,
वर या तरूनी ! ५

पदर खोचूनी, । आलाप झोकूनी,
पंखावीण जाऊं या बाई,
उंच, हवा कापूनी !

६

विमान उडवा, । वाव्यास अडवा,
अग्निबाण पायांनी बाई,
चंद्रावर चढवा !

७

संसार ! संसार ! । रोजच तें घर !
हसूखेळूनिया करुं बाई,
आज शीणपरिहार !

८

११ ऑगस्ट १९६०
विश्रामबाग, सांगली

५९. तरंगिणीची जन्मकथा !

जाति : पादाकुलक

वीणेचे झंकार नादले,
मधुगीतांनी मन मोहरलें;
लहरीवरती लहरी उठल्या,
तरंगुनी त्या धावत सुटल्या ! १

वर्षतूच्या थेंवांवरती—
बसुन, फुलांवर हळू उतरती;
कुंजामार्जी पंख हलवुनी,
वावरती मृदु गुंजन करुनी ! २

पारिजातका हळु स्पर्शितां,
बहर नवा ये टप्टप् हातां;
निशिगंधाला मोहविल्यावर,
फुलें धळुनी आलीं वर वर ! ३

जास्वंदीच्या हृदयांतुन तर,
चौपदरी ये बहरुन अंतर !
गुलाब आणि कण्हेर फुलती !
तरंग सेवित पोपट झुलती ! ४

कल्पवृक्ष वर डुल्लं लागला,
रातेंरापिल्ल बहर उमळला !
तांच तयांची परीचिमुकली—
होउन, सुस्वर गाडें लागली ! ५

६०. रसमेव !

[श्रेष्ठ कलावंत प्रा. ना. सी. फडके यांस]

प्रतिभा तव बलवान्
खेळवी कला चिरंत महान् ! ॥ ध्रु० ॥

वीणा तव कुंजांत वाजती;
पदन्यास मंजुळ रुमञ्जुमती;
शंकारी रसरंग बहरती—
चढती होत कमान !

१

रसरसलें तें वीणावादन,
नसानसांतुन भरलें गायन !
मधुर बोलके रस ते होउन,
स्फुरली तुजला तान !

२

वदे शारदा तव उदगारीं—
रसमय वाणी, नव आकारीं !
स्वप्नें उभवुन नित सोनेरी—
करविशीं अमृतपान !

३

यक्ष-अप्सरा संसारांतिल-
स्पर्शाने तव फुलती स्नेहल !
जीवन दावुन नव, रसकोमल,
निवाविति डोळे, कान !

४

क्रीडेंतिल रस तुवां घेतला,
लीलेने आकंठ सेविला,
रसिकत्वे रसमेघ वर्षिळा !
अतुल, अलौकिक शान !

५

काढ्यांतुन तव गुलाब फुलले !
स्पर्श कटक पुष्पे झाले !
सौंदर्याचे विश्व उमलले !
शमवी दृष्टि-तहान !

६

* * *

२३ सप्टेंबर १९६०
शांतिकुंज, पुणे ४

करुनी सुंदर आळें, इवलीं-
गुलाब फांदी मी एक खोचीली !
मशागत केली अन् वेळोवेळीं,
आईंच्या हातीं कीं बाळ वाढली ?

१

खतपाणी देतां रोप अंकुरे,
तरारुन आले नवे मुगारे !
तजेल्याने फांदी फांदी डवरे,
नवीन तेजाची सुषमा भरे !

२

विस्तारलेली डहाळी डहाळी,
फूलगुच्छांनी गुलाबी शोभली !
सुगंधाने बाग दरवळली,
प्रसन्न, रंगीन उषा फुलली !

३



दीनवाणा कुणी एक अनाथ,
आणून पाळिला बाळ घरांत !
आईंच्या मायेने स्नेहल भावें-
पोषीलें, पुसूनी प्रेमें आसवें !

४

तहान-भुकेची माया वाहिलीं,
निगराणी अशी आर्त चालली !

ज्ञानाचे घास नि व्यवहाराचे—
मंत्र दिधले भीं कांही नित्याचे !

५

फोफावत गेलें, पोषलें रोप;
धुमसे अंतरीं रगेल कोप !
काळें करी कुठे, घाल्ही घाव !
आणि काळोखाने भरला गांव !

६

२४ ऑक्टोबर १९६०

विश्रामबाग, सांगली

मंजू रुसली ! कोपण्यांत बसली !
 आई आली, उठली नाही !
 ताई आली, उठली नाही !
 बाबा आले, हलली नाही !

आईनं केली मग गंमत एक !
 खुषीत उठली लाडकी लेकर !
 शेंगदाणे पुढं केले !
 माकड धावुन जवळ आलें !
 दोहातांची ओंजळ भरली,
 तोंडाजवळ तशीच नेली !
 एक दाणा नाकांत गेला !

काढतां काढतां आंतच शिरला !! १

आई भ्याली ! ताई भ्याली !
 इकडं तिकडं धावूं लागली !
 मंजू गेंगाणं बोळूं लागली !
 आई कांही थांबेना !
 दाणा कांही निघेना !
 'डॉक्टर नाही ! गाडी नाही !
 करावं आता काय तरी बाई !
 शेजारची गाडी घेऊन जाते
 डॉक्टरला तरि दाखवून येते !'

आई पुटपुटली ! मंजू ऐकते !

२

‘ दाँतर नाँतों ! ’— हे गेंगाणे सूर—

मंजू बोलली ! डोळ्यांत पूर !

‘ करावं काय बाई !

कळेचना कांही ! ’

आई पुटपुटली अन् घाबरली !

मंजूच्या नाकांत वळवळ झाली !

एकदम आली सटकन् शिक !

दाणा बाहेर पडला ठीक !

३

बाहेर आलेला दाणा पाहून,

पोटं फुटलीं हसून, हसून !

४

* * *

२७ ऑक्टोबर १९६०

विश्रामबाग, सांगली

६३. नामाची सारंगी !

छंद—अभंग

[' अमृतदेवता ' या खंडकाव्यांतून]

- तुझिया नामाची वाजली सारंगी,
माझ्या अंतरंगीं एक दिस ! १
- आकर्षिले स्वरीं अणु अणु माझे,
चैतन्य आवाजे संचारले ! २
- रक्तकगांतून लहरी, लहरी,
महिरून हरी भान माझे ! ३
- त्याच संगीताचा मनीं घोष चाले,
नाममय झाले विश्व सारे ! ४
- कल्पनेस माझ्या व्याप्ती न कल्पवे,
माधुरीचे नवे रूप गोड ! ५
- तुझिया नामाचा म्हणूनी धोसरा,
जिवाचा आसरा एक झाला ! ६

२५ एप्रिल १९५७

फलटण

स्पष्टीकरणार्थ संदर्भ व टीपा

१. सोनेरी चांदणें

(१) सोनेरी चांदणें : पावसाळ्यांत पाऊस पडून गेल्यावर, एकाद्या सायंकाळीं असें दृश्य दिसतें कीं मावळतीला सूर्य मावळत आहे व त्याचे सौम्य किरण पूर्वेकडे पडत असलेल्या एखाद्या ढगाला व पावसाच्या धारेला भेदून पलीकडे गेले आहेत ! अशा वेळीं इमारतीवर, झाडांझाडांवर सुंदर कोवळे, पिवळसर पण सौम्य असें बहारीचें ऊन्ह दिसतें व समोर पूर्वेला पावसाच्या ठिकाणीं सप्तरंगी इंद्रधनुष्य दिसतें. या क्षणभर दिसणाऱ्या उन्हाला ' सोनेरी चांदणें ' असें मीं म्हटलें आहे, हें सामान्यतः पावसाळ्यांत पण विशेषेकरून भाद्रपदांत दिसतें.

४. गंगाभाग्य

अंगरूप...कर्पूराचें = " म्हणे शुचित्व गा ऐसें । जयापाशीं दिसे । आंग मन जैसे । कापुराचें " —ज्ञानेश्वर अ. १३-४६१.

५. आम्रवृक्षास

ब्रह्मा करी रंजन = इथें ' ब्रह्मापि नरं न रंजयति, ' हें सुभाषित अभिप्रेत आहे.

६. रसिकरंग

(१) रसिकरंग = सुप्रसिद्ध कर्नाटक कवि डॉ. रं. श्री. मुगळी.

(२) अन्नभुकेल्यांची.....मंदार मुलें = या ओळींत त्यांची एक कादंबरी व कविता यांचा संदर्भ आहे.

८. सप्तपदी

' नातिचरामि ' = विवाहविधीच्या वेळीं व्यावयाची शपथ.

सोनेरी चांदणें

९. प्रियदर्शन

निळावंती = हें एक थंडीच्या दिवसांत फुलणारें झाड आहे. याला निळसर टपोरीं फुलें येऊन, त्यांच्या घोसांनी तें थंडीच्या दिवसांत सुंदर डवरतें. त्याचें नांव मिळेना, म्हणून त्याला मी निळावंती असे म्हटलें आहे.

१०. अंगाई

स्वतंत्र भारतांतील मुलांना गावयाची ही अंगाई आहे.

११. वियांगिनीने केलेलें अभिनंदन

या कवितेंत मृत पत्नीचा आत्मा वायुरूपानें आला आहे व पतीचें अभिनंदन करून, तो परत जात आहे, अशी कल्पना आहे.

१२. धणी

परतत्वस्पर्श...रसिकत्वीं = “ वाचे बरवें कवित्व । कवित्वीं रसिकत्व । रसिकत्वीं परतत्व—। स्पर्शुं जैसा ”—ज्ञानेश्वर.

१४. मनीषा

वयाला ६० वर्षे पूर्ण होऊन ६१ वें वर्ष लागलें त्या दिवशीं मनाला काय वाटलें, तें या कवितेंत ग्रथित केलें आहे.

१६. विमामहर्षीस

(१) ही कविता म्हणजे सातान्याचे विमामहर्षी कै. वा. ग. चिरमुले यांना वाहिलेली श्रद्धांजलि आहे.

(२) निकेतनीं = सातान्यांतील ‘ चिरमुले निकेतन ’

१८. दीपिक

ही कविता माझी पत्नी सां. उमा ऊफ माई हिला उद्देशून लिहिली आहे.

२०. शारदेच्या दरबारांत पं. नेहरू

५ ऑक्टोबर १९५४ सालीं दिल्लीस विद्वद्वर्य श्री. लक्ष्मणशास्त्री जोशी यांच्या अध्यक्षतेखाली ‘ महाराष्ट्र साहित्य संमेलन ’ भरलें. त्याचें उद्घाटन

करण्यास, त्या वेळीं अचानक पडलेल्या मुसळधार पावसांतून पं. नेहरू आले व त्यांनीं मराठीचा गौरव केला. त्या प्रसंगाला उद्देशून ही कविता आहे.

२४. श्रीज्ञानेश्वरांच्या पायांशीं

फलटणला पुन्हा १९५५ सालीं नोकरीस जातांना तेथील श्रीज्ञानेश्वर-मंदिरांतील श्रीज्ञानेश्वरांच्या सुंदर मूर्तीच्या दर्शनाच्या वेळीं त्यांच्या पादुकांवर वाहिलेला अभंग.

२५. देवलांच्या मळ्यांतील कल्पवृक्षास

सांगली येथें विश्रामबागला देवलांचा एक मळा असून तेथें नाटककार कै. गो. ब. देवल यांनीं एक छोटेंसं घर बांधलें होतें. हें घर कल्पवृक्षाच्या छायेत होतें. येथेंच देवलांनीं आपल्या कलाकृति निर्माण केल्या. विश्रामबागेतील माझ्या घराच्या माडीवरून हें दृश्य दिसतें.

२६. कविवर्य द. रा. बेंद्रे यांस

सुप्रसिद्ध कर्नाटक कवि द. रा. बेंद्रे हे कौंचवधाची कल्पना गांधीतत्त्वांत फारच सुंदर रीतीनें बसवून दाखवितात; 'कौंचवध' चित्रांत वाल्मीकीने वर हात करून सांगितलेलें तत्त्वज्ञान अहिंसेला पोषक कसें आहे, हें ते चपलखपणें सांगतात. त्याला यांत संदर्भ आहे.

२९. नवीन शक-वर्ष

भारत सरकारनें शक व वर्ष हीं जुळतीं करून, २२ मार्च १९५७ रोजीं चालू केलीं. त्याला उद्देशून ही कविता आहे.

३२. प्रतापगडाचें सौभाग्य

(१) दि. ३० डिसेंबर १९५७ या दिवशीं प्रतापगडावर श्रीमत् छत्रपति शिवाजीमहाराज यांचा अश्वारूढ पुतळा पं. जवाहरलाल नेहरू यांच्या हस्ते उद्घाटित झाला. या वेळीं त्या खोऱ्यांत प्रचंड गर्दी लोटली होती. त्या वेळीं स्वराज्य स्थापन करणारे जणु कांही ' जुने व नवे शिवाजी ' भेटले अशी कल्पना करून हा पोवाडा लिहिला आहे. यांत, स्वराज्य आलें, गेलें व

सोनेरी चांदणें

पुन्हा परत आलें, यांचा इतिहास व साक्षात् त्या वेळीं प्रतापगडाच्या खोल्यांत जीं दृश्यें दिसलीं त्याचें चित्रण आहे. या प्रचंड समारंभाचें सर्व श्रेय श्री. ना. यशवंतराव चव्हाण व मालोजीराजे ना. निंबाळकर यांना आहे.

(२) वंशपेटारे = बुरडी मोठे पेटारे. यांत बसूनच छत्रपति आग्या-हून निसटून गेले.

(३) कृष्णा-यमुना-मुळा = सातारा, दिल्ली व पुणें या ठिकाणीं.

३३. पूजा

फलटण येथील माझें शैक्षणिक कार्य संपलें, त्या वेळीं माझ्या विद्यार्थ्यांनी माझा गौरव केला. त्या वेळीं त्या विद्यार्थ्यांना उद्देशून ही कविता लिहली आहे.

३५. गुन्हेगार बालकें

सातान्यांतील ' पोरसुधार शाळा ' (रिमांड होम) पाहून काय वाटलें तें यांत व्यक्त केलें आहे.

३७. सोनपाकळी

गोविंद-गोपाळ = नांव ठेवण्याच्या वेळीं दोन स्त्रिया पाळण्याच्या दोन्ही बाजूंना उभ्या राहून बालकाला हातांवर आडवें घेतात आणि मग एकीमेकी परस्परांकडे त्याला पाळण्यावरून देतात व पाळण्याखालून घेतात. या संस्काराचे वेळीं ' गोविंद ध्या ! गोपाळ ध्या ! ' असें म्हणण्याची चाल आहे.

३८. पंचारती

शाळेंतील शेवटची परीक्षा देऊन, कायमच्या दूर जाणाऱ्या विद्यार्थ्यांना शाळामातेने ओवाळलेली ही ' पंचारती ' आहे. ही पंचारती ओवाळतांना ती त्यांना आपण ज्ञान, अनुभव, प्रेरणा कोणत्या व कां दिल्या, तें पोटागीने (पोटांतील तळमळीने) सांगत आहे.

३९. वृंदावनांतील तुळस

(१) कलावंतांच्या जीवनाचे दोन विभाग असतात. एक त्याचें रोजचें

व्यवहारी जीवन व दुसरें त्याचें सौंदर्यजीवी ध्येयवादी जीवन. यांनाच अनुक्रमें ' घर ' व ' वृंदावनांतील तुळस ' असें या कवितेंत संबोधण्यांत आलें आहे. ' घर ' व ' वृंदावनांतील तुळस ' हीं त्या त्या वृत्तींचीं प्रतीकेंच आहेत.

(२) ' भूतें साम्या येतीं ! ' श्रीतुकाराममहाराजांनी साक्षात्कारानंतर ' अवधीं भूतें साम्या आलीं ! ' असें म्हटलें आहे. तसेंच जीवनांतलें ध्येय व खरें सुख यांविषयी 'तुका म्हणे सुख पराविया सुखें । अमृत तें मुखें खवतसे' असें म्हटलें आहे.

४०. सहवास तुझा

(१) प्रीति ही एका दृष्टिक्षेपांत जडलेली असो किंवा चिर सहवासांतून उमललेली असो, तिच्या दृढतेला ' सहवास ' हाच निकष कारणीभूत होत असतो. त्यामुळें खरें महत्व सहवासाचेंच असतें. तोच आपल्या जीवनाचे कोनकोपरे निमुळते करून, दोन मनै-अंतःकरणें एकांत एक बसतीं म्हणजेच एकरूप करतो, हें या कवितेचें मुख्य सूत्र आहे.

(२) रापलीं=श्रम करीत राहिलीं. कळंजुन = व्याकूळ होऊन कोमून = कोमेजून. कल्पतरु = वडिलांना दिलेली उपमा आहे. घरवात = सांजवात, संसार. शद्धुचि = अपवित्र, अमंगल शब्द कधीहि न उच्चारणी, इतकेंच नव्हे तर केवळ चांगले व मंगल शब्दच बोलणारी व्यक्ति. ज्ञानेश्वर म्हणतात—“तैसें साच आणि मवाळ । मितले परि सरळ । बोल जैसे कळोळ । अमृताचे ” असें बोलणारी (ज्ञाने. अ. १३-२६९) म्हणून अमृतदेवता.

(३) सायुज्य : एकरूपता, एकतानता.

४१. धन्य देवि तूं

(१) ही कविता कै. न्या. मू. रानडे यांच्या पत्नी—पुण्यांतील सेवासदनच्या संस्थापिका श्री. रमाबाई ऊर्फ वहिनीसाहेब रानडे यांस उद्देशून लिहिलेली आहे. कै. रमाबाईंनी महाराष्ट्रांत स्त्रीशिक्षणाचें फार मोठें कार्य केलें व “ आमच्या आयुष्यांतील आठवणी ” हें उत्कृष्ट आत्मचरित्र लिहलें.

सोनेरी चांदणें

(२) उल्का = पडलेल्या तारका. फुलेल = अत्तर. सदनीं = (तुझ्या) संस्थांत. अनुगांनी = अनुयायांनी. ओठंगलें = (दाराशीं येऊन) ठेपलें.

४४. संपत् शुक्रवार

श्रावणांतील दर शुक्रवारीं घरांतील वडील स्त्री-आजी, आई, वहिनी-पुरणाची पंचारती करून तिने घरांतील सर्व लहानांना स्वयंपाकघरांत किंवा देवघरांत एकत्र बोलवून, त्यांना ओवाळते व ' उदंड औक्षवंते व्हा ! ' म्हणते. इतकेंच नव्हे तर पोटापाठीमागे दूर दूर गेलेल्या व म्हणून इथे गैरहजर असलेल्यांना ओवाळण्यासाठी ती हवेंत चारी दिशांना अक्षता फेकते व त्यांना हवेंत ओवाळून 'उदंड औक्षवंते व्हा ! म्हणते. हा संस्कार या कवितेच्या पाठीशीं आहे.

४३. वासंतिक किमया

वासंतिक किमया = तारुण्याने केलेली करामत. सलली : खुपली, रतली.

४५. मंगल कलश !

(१) संयुक्त महाराष्ट्र होण्याच्या आधी द्विभाषिक राज्याचे (महाराष्ट्र व गुजराथ) मुख्य मंत्री ना. यशवंतराव चव्हाण हे दिल्लीस (१९५९) त्याच्या खटपटीसाठीं गेले होते. तेव्हा कुणी तरी विचारलें- ' हे आता दिल्लीहून काय आणणार ' त्यावर कुणी तरी उत्तर दिलें- " मंगल कलश ! " स्वतंत्र महाराष्ट्रराज्याचे प्रतीक म्हणून हें उत्तर सर्वांनाच शुभंकर वाटून आवडलें. त्याच 'मंगल कलशा' वरील ही कविता आहे.

(२) ऊर्जस्वल = थोर, प्रचंड सामर्थ्य असलेला. वसिष्ठ...भरलेला = यांत रामराज्यांतील वसिष्ठगुरूंचें व महाभारतकालीन श्रीकृष्णाचें सामर्थ्य भरलेलें आहे. कर्मयोग...संगें = लोकमान्य टिळकांचा कर्मयोग, महात्मा गांधींच्या 'सत्य अहिंसा व प्रेम या थोर तत्त्वांशीं एकरूप होऊन येत आहे. कफमल = काळंबेरें. हे झरे.....तारे = विदर्भ, मराठवाडा व पश्चिम महाराष्ट्र हे सर्व एक होत आहेत हा भाव. अस्मिता = आमचेपणा.

(३) यशवंत = ना. मुख्य मंत्री यशवंतराव चव्हाण.

(४) वैनतेय कलशाचा = गरुडाने (वैनतेयाने) आपल्या मातेसाठी (विनतेसाठी) स्वर्गांतून 'अमृताचा कलश' आणला ; त्याप्रमाणें ना. यशवंतरावांनीं महाराष्ट्र भूमीसाठीं-छत्रपतींच्या मायभूमीसाठी हा 'स्वातंत्र्याचा कलश' आणून ते वैनतेयाप्रमाणें झुंजार ठरले. अशा रीतीने ' त्यांनी मायभूमीचे पांग फेडून ते धन्य झाले, ' हा भाव.

४६. भिलईच्या यंत्रविशारदांस

(१) भिलईचा (मध्यप्रदेश) कारखाना पहाण्यास गेलों असतां तेथे रशियन यंत्रज्ञांनी केलेली प्रचंड यंत्रांची उभारणी पाहिली. त्यांचे प्रमुख एंजीनियर श्री. गोल्डिन् यांची माझी, माझे विद्यार्थीभिन्न श्री. प्रभाकर दाणी, हिंदी प्रमुख एंजिनियर यांनी ओळख करून दिल्यावर, श्री. गोल्डिन् यांनी विचारलें— " हीं यंत्रें तुम्हांला काव्याला प्रेरणा देऊं शकतात की नाही ? " मी 'होय' म्हटलें व त्याच दिवशीं ही कविता लिहिलीं. यंत्रयुगाला भिण्याचें कारण नाही. हें यंत्रयुग आपण पचविलें पाहिजे. कारण हीच आमची नवीन 'गीता' आहे. यांतूनच 'जीवाचें मैत्र' व 'विश्वशांती' निर्माण होईल.

४७-५० अभंग

कलकत्यास गंगेच्या अलीकडल्या तटावर श्रीरामकृष्णाश्रम, श्रीविवेकानंद निवासमंदिर व श्रीविवेकानंदमंदिर अशीं सुंदर मंदिरे आहेत. एकांत श्रीरामकृष्णांची सुंदर बसलेली मूर्ति आहे. श्री. विवेकानंदमंदिरात नुसता 'ॐ कार' आहे व त्यांच्या निवासमंदिरांत त्यांची शेज व त्यांच्या दंड, फेटा आदि वस्तु आहेत. ही मंदिरे इतकीं नीटनेटकीं, सुंदर व स्वच्छ आहेत, कीं पहाणाऱ्याचें मन एकदम प्रसन्न व एकतान होतें. पलीकडल्या तटावर कालीदेवीचें महान् भव्य मंदिर असून, गंगेच्या बाजूला अनेक इतर देवतांचीं लहान मंदिरे आहेत. मधून गंगामाईचा प्रवाह प्रसन्न, गंभीर व शांत वहात असतो. श्रीरामकृष्ण परमहंस व श्रीविवेकानंद या महान् गुरुशिष्यांचा समग्र जीवनेतिहास इथेच घडला.

सोनेरी चांदणें

५१ चामरें

(१) श्रीमंत हि. हा. चिंतामणराव आप्पासाहेब राजेसाहेब, सांगली, यांनीं राज्य सोडून बारा वर्षे उलटलीं. त्यांनीं आपल्या प्रजाजनांसाठी लाखो रुपये खर्चून अनेक गोष्टी केल्या, जनतेचे त्यांनी अनेक प्रकारें कल्याण केलें. वयाच्या सत्तराव्या वर्षीहि त्यांनीं १ लाख रुपयांची देणगी देऊन सांगलीस ' कॉमर्स कॉलेज ' काढण्याची सोय करून दिली. त्या वेळीं जनतेने म्हणजे 'रोटरी क्लबने' आणखी एक लाख रुपये जमवून या कॉलेजला दिले व त्याला त्यांचें नांव दिलें; एक गौरवग्रंथ काढला व डॉ. श्री. राधाकृष्णन् यांच्या अध्यक्षतेखाली त्यांचा प्रचंड सत्कार केला. हा प्रसंग " राजास राजत्व मिळे प्रजामुखी " या तत्वाचें साक्षात् दर्शन घडविणारा होता ! म्हणून या महान् प्रसंगाच्या निमित्ताने ही चारुचामर वृत्तांतून त्यांच्यावर चारुचामरें ढाळलीं आहेत.

(२) सुमसौरभासम=सुम हें सिंहासन व त्यावर बसणारा राजा म्हणजे सुगंध, त्याप्रमाणें. भोगशून्य= निरासक्त. फुलारी = माळी. तव संनिधीं= ... करीं=कायम वसती करण्यास मी सांगलीस आलों व श्रीमंत राजेसाहेबांच्या कृपेखाली राहिलों, असा (वैयक्तिक) भाव. परमार्थिले= परतत्त्वस्पर्शांचे संस्कार केले. कृतिवैखरी = कृति व वाणी यांतील गोडवा, मंगलता. रघुराज्य= खरें रामराज्य तें हें (कीं जिथे राज्य गेलें, तरी प्रजा ही राजाला विसरत नाही). चामर=चवऱ्या. चारुचामर= मराठींतील एकवीस अक्षरांचें एक गणवृत्त.

५२. धर्मभानू

(१) या कवितेंत श्रीरामकृष्ण परमहंस यांचें व त्यांच्या कार्याचें स्मरण-चिंतन आहे.

(२) धर्मभानू = धर्मरूपी सूर्य; सूर्यामुळें जगाला जीवन मिळतें, त्याच-प्रमाणें श्रीरामकृष्णांच्या शिक्वणुकीमुळे आजच्या जगाला जीवन मिळतें हा भाव. विवेक हा हिरा = श्रमिन् स्वामी विवेकानंद हाच कोणी हिरा.

धर्मध्वजा = शिकागो येथील सर्वधर्मपरिषदेंत त्यांनीं. भाषण करून सर्व जगावर विजय मिळवला. **हिरोशिमा जाहलेली** = आजच्या युद्ध-कल्पनेने जळून जात असलेलें जडवादी जग (अण्वस्त्रांनी जपानचे ' हिरोशिमा ' हें गांव शत्रूंनी जाळून खाक केलें, ही कथा प्रसिद्ध आहे.) **कुराणांनी बायबलांनी** = श्रीरामकृष्णांनी सर्व धर्मांतील तत्त्वांची उपासना करून पाहिली, सर्वसिद्धि मिळविली व ईश्वर सर्वत्र एकच आहे, हें सर्वांना पटवून दिलें. **उपनिषदांची वाणी** = म्हणून आतां श्रीरामकृष्णांची वाणी म्हणजे उपनिषदांचीच पुन्हा जन्माला आलेली वाणी आहे, असा भाव.

५३. जय महाराष्ट्र !

(१) ३० एप्रिल १९६० रोजी ' महाराष्ट्रराज्य ' हें भारताच्या घटक राज्यांतलें एक स्वतंत्र राज्य म्हणून जन्माला आलें. या निमित्ताने विदर्भ, मराठवाडा, मुंबई व पश्चिम महाराष्ट्र पुनः जवळजवळ ३०० वर्षांनी एक झालीं. ही घटना लोकोत्तर होती ! मराठ्यांच्या (महाराष्ट्रीयानांच्या) भावना या निमित्ताने उचंबळून आल्या ! अनेकांनी या घटनेने प्रेरित होऊन मायभूमीवर कवनें केलीं ! या संग्रहांतील तिन्ही-चारी कवनें याच प्रेरणेंतून झालेलीं आहेत.

(२) **छत्रपतींचें गौरीशंकर शिखर** = श्रीमत् छत्रपति शिवाजीमहाराज यांनी मराठ्यांचे स्वतंत्र राज्य स्थापून जी अलौकिक किमया केली, तिला इतिहासांत तोड नाही ! ती कामगिरी इतकी उच्च आहे कीं तिला गौरीशंकराच्या शिखराचीच उपमा शोभेल. **बाजी-माधव** = थोरले बाजीराव, थोरले माधवराव पेशवे. **नामा-एका** = नामदेव व एकनाथ. **दमयंती-रुक्मिणी** = या विदर्भातील राजकन्या. **उमा** = सेनापति खंडेराव दाभाडे याची पत्नी. पुढे खंडेराव वारला. बाई दाभाडे हिने अहमदाबादच्या जोरावरखान बाबी या सुभेदारार्शी सामना दिला. उमाबाई विधवा व स्त्री म्हणून जोरावरखान तिच्याशी लढावयासहि कबूल नव्हता; पण शूर उमाबाईने हल्ला चढवून व त्याचा धुव्या उडवून अहमदाबादचा किल्ला सर केला, आणि प्रतिज्ञेप्रमाणे

सोनेरी चांदणें

मगच तेथे जेवण केलें. उमाबाई ही उंच, पीळदार बांध्याची, धाडसी व तडफदार स्त्री होती. या विजयानंतर शाहूराजांनी तिचा फार मोठा सत्कार केला. **रंगो बापू**=सातारचे राजे प्रतापसिंह यांचे दिवाण. याने मराठशाही वांचविण्यासाठी विलायतेपर्यंत मजल मारली व मराठ्यांचें राज्य वांचविण्याचे फार प्रयत्न केले; पण शेवटीं तो त्यांतच कामास आला ! **ज्वलंत फडके**=हरिपंत व वासुदेव बळवंत. **भीम**-डॉ. भीमराव अंबेडकर. **सुधारकगिरा** आगरकरांची वाणी. **तुतारी**=केशवसुत व त्यानंतरचे सर्व कवि यांनी. **माय विनोबा**=आईच्या मायेने वागविणारे संतवीर व भूदानयज्ञ करणारे विनोबा भावे.

५४. प्रियमित्र कवि यशवंत

शोधावया=शुद्ध करण्यास. **शर्मदा**=कल्याणकारक. **कादंबिनी**=मेघमाला स्फुलिंग = ठिणग्या.

५५. महाराष्ट्रगीत

ऊर्मी = लाट. **काळी** = शेतजमीन. **हिंदवी** = भारतीय; छत्रपति शिवाजीमहाराज यांचा हा शब्द आहे; तो त्यांचें व्यापक भारतीय धोरण दर्शवितो. **शिवशक्ति** = ईश्वरी सामर्थ्य. **धामी** = महाराष्ट्रांत; मायघरीं.

५६. ये भंगल महाराष्ट्रा

(१) ही कविता एका निराळ्या दृष्टिकोनांतून लिहिली आहे. ' जय महाराष्ट्र ' या कवितेंत पराक्रमी ऐतिहासिक व्यक्तींचा व त्यांच्या प्रेरक कार्यांचा उल्लेख आहे; तर या कवितेंत निसर्ग, कांहीं ऐतिहासिक व्यक्ति, कांही संप्रदाय, उत्तम ग्रंथ, मावळांतील स्त्रीपुरुष, नवीन युगांतील यंत्रें, श्रमसौंदर्य, मायबोली, भवानीमाता इतकेंच काय पण राज्यकारभारांतील ' चुका ' व परिवर्तन झालेले ' शत्रूहि ' महाराष्ट्रराज्याच्या अभिनंदनार्थ आलेले आहेत, अशी कल्पना केलेली आहे.

(२) **कृष्णा** = छत्रपतींच्या घोडीचें नांव. **गुरु-झेंड्यांसह** = गुरु रामदास व त्यांचा भगवांझेंडा यांच्यासह. **दिव्येतिहास** = अलौकिक पराक्रमाचा इतिहास. **अमात्यराजनीति** = रामचंद्रपंत अमात्य यांनीं लिहिलेला

राजनीतीवरील ग्रंथ. राज्यव्यवहारकोश = छत्रपतींनी पंडितांकडून करवून घेतलेला राज्यव्यवहारांतील नवीन मराठी शब्दांचा कोश. ताजीम = सादर उत्थापन, अभिवादन. नव महंत...महंत = सद्गुरु रामदास यांचा प्रत्येक मठाधिपति महंताला असा कडक आदेश होता, कीं “ महंते महंत करावे. ” लोकशिक्षणाबाबतची ही सूचना चिंत्य आहे. स्वराज्याचें सुराज्य व्हावें व श्रेष्ठांचें सातत्य टिकावें हेंच त्यांतील ध्येय आहे.

५७. एका प्रपंचविदुषीस

(१) प्रपंचविदुषी = प्रपंचशास्त्रांतील म्हणजे संसाराला लागणाऱ्या सर्व गोष्टी जिने आत्मसात् केल्या आहेत व त्यांत जिने पूर्णता मिळविली आहे अशी यशस्वी स्त्री. (हा शब्द सुप्रसिद्ध लेखक माझे मित्र श्री. ना. धों. ताम्हनकर यांनी स्वतः तयार करून प्रथम वापरला .)

(२) ज्ञान = प्रतिष्ठा, स्वाव. निगराणी = जपणूक. उभयांच्या श्रमत्यागीं जीवनकला = संसार यशस्वी करावयाचा म्हणजे पति व पत्नी या उभयतांनी श्रम करण्यास व प्रसंगी त्याग करण्यास तयार झालें पाहिजे. हातवटी = हातोटी, कौशल्य.

(३) हें एक ‘ संस्कारगीत ’ आहे. कोणत्या गुणांमुळें संसार यशस्वी होतो व वडिलधान्यांची दृष्टि त्याबद्दल कशी अलिप्त पण गाढ सहानुभूतीची व कौतुकाची पाहिजे, याचें त्यांत चित्रण आहे.

५८. हिंदोळा हालवूं

(१) नागपंचमीच्या दिवशीं प्रत्येक खेड्यांत कडुलिंबाला दोर बांधून सर्व स्त्रीपुरुष झोके घेतात, ते उंच उंच चढवितात व संसारांतील श्रमाला विरंगुळा देतात. त्याने वृत्ति खेळाडू व उल्हासित होतात. आजच्या सुशिक्षित स्त्रियांनी हें कां करूं नये ?

(२) गवळण = एकनाथांचें गवळणीवरील कृष्णभक्तीचें गीत. “ झुण-झुण पांखुरा । जा माझ्या माहेरा ! ” = हें एक जुने हिंदोळा-लोकगीत आहे.

सोनेरी चांदणें

अग्निबाण = आकाशांत शरीर हवेवर उंच झोकावयाचें म्हणचे एक प्रकारें ' अग्निबाण ' किंवा ' उपग्रह ' फेकण्यासारखें आहे.

५९. तरंगिणीची जन्मकथा

' तरंगिणी ' नांवाच्या एका गोड गाणाच्या सुंदर चिमुकल्या मुलीची ही एक परीकथा आहे. वीगेच्या झंकारांतून व मधुगीतांतून तिचा जन्म कसा झाला व तिला ' तरंगिणी ' हें नांव कसे मिळालें हें यांत कल्पनेनें चित्रित केलें आहे.

६०. रसमेघ

ही कविता महाराष्ट्रांतील एक नामवंत व प्रतिभाशाली कादंबरीकार प्रा. ना. सी. फडके यांस उद्देशून लिहली आहे. संगीत, लेखन, व खेळ यांत त्यांची प्रतिभा सारख्याच सामर्थ्याने वावरते व रसिकांना रस देते. त्यांची प्रतिभा म्हणजे रस देणारी मेघमाला आहे.

६३. नामाची सारंगी

ईश्वराच्या नामाचा आर्त भक्तिभावानें केलेला उच्चार म्हणजे साक्षात् सारंगीचे सूरच ! प्रिय व्यक्तीच्या नामोच्चाराइतकेच ते हृद्य वाटतात. भक्तीची धुंदी चढते. सर्व विश्व नाममय झालेंसें वाटतें. माधुरीचें हें नवें रूप गोड असतें. म्हणून आपल्या जिवाला तोच एक शाश्वत आसरा वाटतो, हा म्हणण्यांतील भाव.

‘ सोनेरी चांदणें ’ मधील छंदोरचना

या काव्यसंग्रहांतील रचना वृत्त, जाति, छंद, गजल व मुक्तछंद या विविध छंदप्रकारांत झालेली आहे. त्याचें स्थूल स्वरूप असें :—

| क्र | नांव | अक्षरें | मात्रा | गण | उदाहरण |
|-----|--------------------|----------------------------|--------|--------|--|
| १ | वृत्त (गणवृत्त) | नियमित | नियमित | नियमित | २२ शेवटचा पाठ पा. ३७ |
| २ | गजल (गणवृत्त) | नियमित | नियमित | नियमित | २५ कल्पवृक्षास पा. ४२ |
| ३ | जाति (मात्रावृत्त) | अनियमित | नियमित | नाहीत | ६० रसमेघ पा. १०१ |
| ४ | छंद (अक्षरवृत्त) | नियमित | नाहीत | नाहीत | ३९ वृंदावनांतील तुळस पा. ६८ |
| ५ | मुक्तछंद | नियमित किंवा अनियमित | नाहीत | नाहीत | ६ रसिकरंग पा. १० व ६२ शेंगदाणा पा. १०७ |

कांही गजलांमध्ये एका गुरुऐवजीं दोन लघु चालतात. पण असे गजल फार थोडे (उदा. कल्पवृक्षास पा. ४२). फार्शीतील गजल हे मराठीतील वृत्ता-प्रमाणेंच शास्त्राने नियमबद्ध केलेले आहेत. मराठी वृत्तें व गजल यांत फरक एवढाच, कीं मराठी वृत्ताचा गण तीन अक्षरांचा असतो व गजलांतील गण चार अक्षरांचा असतो. उदाहरणार्थ :—

मराठी वृत्त : मी पूजिलें तुज मनोमय भावनेने. (वसंततिलका)

गणाक्षरें : मी पू जि । लें तु ज । म नो म् । य भा व । ने ने

लघुगुरु : — — ७ । — ७ ७ । ७ — ७ । ७ — ७ । — —

गण : त । भ । ज । ज । गा गा

सोनेरी चांदणें

गज्जल : तूं एक जिवा शांति दिली प्रेमळ भावें (भिल्लीण)

गणाक्षरें : तूं ए क जि । वा शां ति दि । ली प्रे म ळ । भावें.

लघुगुरु : — — ७ ७ । — — ७ ७ । — — ७ ७ । — —

गण : ' — — ७ ७ ' या गणाच्या पुनरुक्तीनें हा गज्जल सिद्ध झाला आहे. फार्शीत यातिभंग मानीत नाहीत. तसेंच गणाला नांवेहि नाहीत.

वृत्त व जाति

वृत्त किंवा जाति यांमध्ये लघु अक्षराची एक मात्रा व त्याची खूण ७ ही, आणि गुरु अक्षराच्या दोन मात्रा व त्याची खूण — असते. (उदा० संगीतध्वनि — — — ७ ७). पुढे जोडाक्षर आलें तर सागील अक्षर गुरु होतें (उदा. तध्व — ७). जातीस मात्रांचें बंधन आहे. अक्षरांचें नाही.

छंद

छंदांत प्रसंगोपात्त न्हस्वाचे दीर्घ वा दीर्घाचे न्हस्व उच्चार करण्यास परवानगी असते. (उदा. ' सुंदर तें ध्यान ' यांत र व न दीर्घ आहेत व तें न्हस्व आहेत. क्वचित् तीन मात्रा इतका देखील प्रदीर्घ वेळ देण्याची पद्धत आहे. (उदा. ' वेलीमध्ये वे ऽ ल कोमल. ')

वृत्त

मराठी वृत्तशास्त्राने एकूण आठगण मानले आहेत. त्यांचें सूत्र डॉ. माधवराव पटवर्धन यांनी ' यमाताराजभानसलगम् असें स्वतां रचून तयार केलें आहे. त्यांत प्रत्येक गणाचें म्हणजे य म त र ज भ न स यांचें नांव आणलें असून शिवाय लघूचा ल व गुरूचा गम्हि आणला आहे. या सूत्रावरून कोणत्याहि गणाच्या नांवाच्या अक्षरापासून तीन अक्षरें उच्चारलीं कीं त्या गणाच्या मात्रा मिळतात व त्याचे लघुगुरु कळतात. उदाहरणार्थ य गण म्हणजे या मा ता (७ — —), म गण म्हणजे मा ता रा (— — —), किंवा स गण म्हणजे स ल ग म् (७ ७ —). याप्रमाणें आठहि गणांचीं लक्षणें कळतात.

मुक्तछंद

मुक्तछंदांतील ओळीला लांबीचें किंवा गणमात्रांचें बंधन नाही. जेवढा भावगर्भ विचार तेवढी ओळ. यामधे क्वचित् पांच व सहा अक्षरांचे शब्द पुनरुक्त होऊन येतात. परंतु छंदरचनेंतील सर्व नियमांपासून त्याची मुक्तता हेंच त्याचें खरें लक्षण होय. त्याला 'स्वैरपद्य' हेंहि नांव आहे.

अधिक माहितीसाठी डॉ. माधवराव पटवर्धन यांचें 'पद्यप्रकाश' हें पुस्तक पहा.

सुनीत

सुनीत हा शब्द 'गिरीश व माधव जूलियन' यांनी मिळून Sonnet या इंग्रजी शब्दापासून तयार केला. 'सुनीत' हें प्रामुख्याने त्यांतील कारागिरी (रचना) बद्दल प्रसिद्ध असल्याने, 'सुष्ठु नीतम्' असें त्यांनी त्याचें समर्थन केलें आहे. सुनीत हा काव्यप्रकार व वृत्तप्रकारहि आहे. तो पाश्चात्य वाङ्मयांतून प्रथम केशवसुतांनी आपल्याकडे आणला. त्यांत १४ ओळी असतात व त्याचे १२ + २ (शेक्सपियरची पद्धत) किंवा ८ + ६ (मिल्टनची पद्धत) असे दोन प्रकार केलेले आहेत. शेक्सपियरच्या पद्धतींत १२ ओळींत भावगर्भ विचारांचा परिपोष व शेवटच्या दोन ओळींत कलाटणी असा भाग असतो; तर मिल्टनच्या पद्धतींत दोन तुल्यबल पण भावगर्भ विचारांचें परस्परविरोधी असें आंदोलन चित्रित केलेलें असतें. मानवी मनांत येणाऱ्या उलट-सुलट विचारांच्या आंदोलनाला 'सुनीत' हें अत्यंत समर्पक वाहन आहे. त्यामुळेंच सुनीत हा काव्यप्रकार व वृत्तप्रकार म्हणून समजला जातो.

अधिक माहितीसाठी रविकिरणमंडळाच्या 'काव्यविचार' पुस्तकांतील प्रा. श्री. बा. रानडे यांचा 'सुनीत' हा लेख, किंवा प्रा. शं. के. कानेटकर (गिरीश) यांच्या 'काव्यकला' पुस्तकांतील 'सुनीताची भावना व बांधणी' हा लेख पहा.

पहिल्या ओळींची सूचि

| | |
|--------------------------------------|-----|
| १ अधिराज आपण शोभलां | ८५ |
| २ आज तुझ्या अंगणांत | ९६ |
| ३ आनंदाने करुं विज्ञाना ! | ६३ |
| ४ आत्तेष्टांच्या प्रेरणेने | ६० |
| ५ आला संपत् शुक्रवार ! | ७४ |
| ६ अंगाचे तुकडे जळून रविच्या | ९१ |
| ७ करुनि तपस्या कर्तृत्वें | ७९ |
| ८ करुनी सुंदर आळें, इवलीं - | १०४ |
| ९ कारुण्याचें जीवन यांच्या | ६२ |
| १० किती चतुर तुझी रे कला | ४५ |
| ११ किरण नवे झळझळले | ९३ |
| १२ कुणि साधुवृत्तिने पाचारण | ५८ |
| १३ कांतिचें निशाण आज उंच | १२ |
| १४ गतिमान नदासम मी व्हावें ! | २२ |
| १५ गेलों रंगुनि मी तुम्हां | ३७ |
| १६ चल साखि चालूं सात पावलें | १३ |
| १७ चंद्रिकेची कांती, नक्षत्राचें रूप | १९ |
| १८ चांदण्यांत कोण पसरी निखारे ! | ८ |
| १९ जयजयकार तुझा नित गाऊं | ९२ |
| २० जयजयजय, हे महाराष्ट्र ! | ८९ |
| २१ जाणार सोडुनी आज तुम्ही | ६६ |
| २२ जाळींतुनी अवलोकितां | ४२ |
| २३ जीवन ऐसैं भेडसावतें | ३९ |
| २४ टोल्यामागुन बसतां टोले | १ |
| २५ डोळाभर पाहे फेटा हा काषाय | ८४ |

| | |
|--------------------------------------|-----|
| २६ तव वाढदिवस हां आज | ३१ |
| २७ तुझिया नामाची वाजली सारंगी | १०८ |
| २८ तुझ्या स्नेहल भावाचे | ५३ |
| २९ तुम्ही थोर अवतारी | ८७ |
| ३० तुम्ही सद्गुरु, सद्गुरु ! | ८१ |
| ३१ तो पहा चालला रसिकरंग | १० |
| ३२ थोर नामीं तुझ्या लावूनिया रति | २८ |
| ३३ दरबार भव्य हा सरस्वतीचा भरला ! | ३३ |
| ३४ धन्य देवि, तूं किमया केलिस | ७२ |
| ३५ धन्य धन्य आज झालों | ४० |
| ३६ नाथा, करांत कर घेउनि | १८ |
| ३७ पुण्य गाठीं कांही म्हणूनिया आलों | ८२ |
| ३८ पुण्यशील ही जिवाजिवांची | ५४ |
| ३९ प्रतिभा तव बलवान् | १०२ |
| ४० प्रतिभाशाली ! प्रतिभाशाली ! | ४३ |
| ४१ प्राजक्ताचा सडा अंगणीं झाला ! | १६ |
| ४२ प्रीत तुझी नखरेल ग ! | ५२ |
| ४३ भग्न जाहलें विशाल मंदिर | ३ |
| ४४ भाग्यलक्ष्मी आली घेऊनिया माळ | ४७ |
| ४५ मनोमन देई प्रेरणा ही वाणी | ८३ |
| ४६ मंगल मधु मंजुळ का नाद | १५ |
| ४७ मंजू रूसली ! कोपन्यांत बसली ! | १०६ |
| ४८ ये आंत कलंडुनि माप उंबन्यांतलें | २४ |
| ४९ ये, ये, ये, नव वर्षा ! | ४९ |
| ५० वृंदावनांतील माझी नको तुळस दुखवूं | ६८ |
| ५१ वीणेचे झंकार नादले | १०० |
| ५२ वेधी मोहर, ये फुलोरुन | ९ |

सोनेरी चांदणें

| | |
|-------------------------------------|----|
| १३ सखि, सैल करी आवळली | ७५ |
| १४ सरी मृगाच्या वीसंडूनी | ६ |
| १५ सहवास तुझा लाभला ! | ७० |
| ५६ सह्यगिरीची तपोवनें तूं | २६ |
| ५७ सूर्या, उघड सर्व तव डोळे ! | २० |
| ५८ सोनचाप्याची का झोपली कळी | ६४ |
| ५९ सोन्यामोतियाचें झालें न पूजन | ३५ |
| ६० स्नेहल, स्नेहल दीपिका जिवाची ! | २९ |
| ६१ हा आला मंगल कलश महाराष्ट्राचा ! | ७७ |
| ६२ ही न्यहार दिसते उतरण ! | ७६ |
| ६३ हिंदोळा हालवूं ! आकाशीं झुलवूं ! | ९८ |

* * *



REFBK-0011993



कवि गिरीश यांचे साहित्य

| | पद्य | प्रसिद्धिकाल |
|-----------------------|--------------------------------|--------------|
| १ अभागी कमल ... | वैधव्यजीवनावरील खंडकाव्य | १९२४ |
| २ कला ... | कलाजीवनावरील खंडकाव्य | १९२६ |
| ३ आंबराई ... | शेतकरीजीवनावरील खंडकाव्य | १९२८ |
| ४ कांचनगंगा ... | स्फुट कविता १९१३ ते १९३० | १९३० |
| ५ फलभार ... | ... " " १९३० ते १९३४ | १९३४ |
| ६ मानसमेघ ... | ... " " १९३४ ते १९४३ | १९४३ |
| ७ चंद्रलेखा ... | ... " " १९४३ ते १९५० | १९५१ |
| ८ अनिकेत ... | भाषांतरित खंडकाव्य-Enoch Arden | १९५४ |
| ९ कांचनमेघ ... | ४ ते ६ मधील निवडक स्फुट कविता | १९५५ |
| १० सोनेरी चांदणें ... | स्फुट कविता १९५० ते १९६० | १९६० |

गद्य

| | | |
|-----------------------|---------------------|------|
| ११ काव्यकला ... | स्फुट टीकालेख | १९३५ |
| १२ मराठी नाट्यछटा ... | नाट्यछटेवरील प्रबंध | १९३९ |

संकल्पित

गद्य

| | | |
|-------------------------------|--------------------------------|--|
| १३ परिमळा ... | आजवरचे स्फुट टीकालेख | |
| १४ रसग्रहणें ... | कांही कवितांचा रसस्वाद | |
| १५ मला भेटलेले विद्यार्थी ... | शब्दचित्रें | |
| १६ माझीं पूजामंदिरे ... | कांही शैक्षणिक अनुभवांची कहाणी | |

मिळण्याचीं ठिकाणें

- (१) व्हीनस प्रकाशन, ४१० शनिवार, पुणे २.
 (२) प्रा. शं. के. कानेटकर, ' कांचन ' विश्रामबाग
 पो. विलिंग्डन कॉलेज, सांगली,
 जि. सांगली